r`rh; v/;k;

^^Mk- d`".kejkjh 'kekZ ds dk0; esa lkekftd & lkaL—frd psruk**

r'rh; v/;k;

^^Mk- d".kejkjh 'kek d dk0; e lkekftd & lkL—frd psruk**

¼v½ dk0; %

चेतना का अर्थ है जागृति, साहित्यकार अपनी बहुमूल्य कृतियों के माध्यम से समाज में चेतना, जागृति करने का ही कार्य करता है। साहित्य के माध्यम से वह उदात्त और परिष्कृत मानवीय संवेदनाओं को, भावनाओं को अभिव्यक्ति देता हैं साहित्य का प्रयोजन ही है, सबका हित। गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा भी है–

कीरति भनिति भूति भल सोई।
सुरसरि सम सब कह, हित होई।।

पावन गंगा जिस प्रकार बिना किसी भेदभाव के सबका मंगल करती है, उसी प्रकार साहित्य की सरस धारा भी, सबके लिये मंगलकारी ही होती है। मानव के मन में करुणा, सबके कल्याण की भावना, वत्सलता, परोपकार, जैसी अनेक वृत्तियाँ संस्कारों के रूप में सुषुप्त अवस्था में विद्यमान रहती हैं। उन्हें जाग्रत कर, सुसंस्कृति बनाने का प्रमुख कार्य ही साहित्यकार करता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये रचनाकार साहित्य की विविध विद्याओं में अपने उन्नत समुन्नत विचारों को प्रकट करता है। इसकी भाषा में उसके शब्दों में संजीवनी शक्ति होती है, जो मानव को मानव बनाती है। भटके हुए व्यक्तियों को मार्ग दिखाती है। व्यक्ति का जीवन लक्ष्य निर्धारित करती है और इस

तरह सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना का प्रसार करती है। साहित्यकार सचमुच ही चेतना का संवाहक होता है। उसके कारण ही, समाज में चेतना का प्रसार होता है। उसकी इस असीम सामर्थ्य के कारण समाज में उसका विशिष्ट स्थान होता है। वह चेतना का सूर्य है। उसके शब्दों में अपरिमित शक्ति होती है। यही शक्ति समाज में राष्ट्र में चेतना की प्रसारक होती है। वह हृदय परिवर्तन तक कर सकता है। रीतिकाल के सुप्रसिद्ध कवि बिहारी लाल के एक ही दोहे ने उनके आश्रयदाता मिर्जा राजा जयसिंह को फिर से समाज सेवा में प्रवृत्ति कर दिया था। 'बिहारी सतसई' का वह प्रसिद्ध दोहा भला कौन भूल सकता है–

नहि पराग नहि मधुर मधु, नहि विकास इहि काल।
अली कली ही सों विध्यों, आगें कौन हवाल।।

इस एक दोहे में महाराज जयसिंह का हृदय परिवर्तन कर दिया था, वे अपनी नवविवाहिता महारानी के प्रेमपास में बँधकर ऐसे भटक गये थे कि उन्होंने समाज की सुधबुध ही छोड़ दी थी। कविता और साहित्य की ऐसी अद्‌भुत – अपूर्व शक्ति के असंख्य उदाहरण देखे जा सकते हैं।

भारतीय समाज में नवजागरण तथा सांस्कृतिक चेतना के प्रसार में साहित्य के योगदान को कभी भुलाया नहीं जा सकता। हमारे स्वतंत्रता संग्राम में 'वन्दे मातरम्' तथा 'झण्ड़ा ऊँचा रहे हमारा' जैसी राष्ट्रीयता से ओतप्रेत रचनाओं ने जो अलख जगाई थी, उसके कारण ही आज हम स्वतंत्र भारत में आत्म सम्मान के साथ सांस ले रहे हैं। स्वतंत्रता के बाद भी साहित्यकारों की लेखनी में सामाजिक शिक्षा, सामाजिक संस्कारों तथा जीवन को नया प्रकाश देने का उद्‌भुत कार्य

किया है। राष्ट्रीय चेतना, देश भक्ति की भावना और देश सेवा में सर्वस्व समर्पण की भावना साहित्यकार की ही देन होती है। श्रेष्ठ साहित्य के अभाव में राष्ट्रीय जागरण का कार्य असंभव है। राष्ट्रीय चेतना और मूल्य परक सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना के प्रसार में डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा के साहित्य का भी योगदान कम नहीं है। उनके काव्य के अतिरिक्त चेतना के प्रसार में जो योगदान दिया है, वह स्वागत योग्य है। प्रस्तुत अध्याय में यहाँ क्रमशः इस दृष्टि से आपकी काव्य कृतियों का सम्यक् मूल्यांकन करने का प्रयास किया जा रहा है।

fdj.k ¼dk0; laxzg] 1960½

'किरण' डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की प्रकाशित सर्वप्रथम काव्यकृति है। प्रस्तुत संकलन में कवि ने माँ सरस्वती से प्रार्थना करते हुए, सभी मनुष्यों को हर दृष्टि से सुखी, कंटक रहित जीवन जीने के लिये वर माँगा है। वह कहता है कि माता मुझे ऐसा हृदय दे, जो किसी भी दुःखी को देखकर विकल हो उठे, वह उनके दुःख से दुःखी होकर अश्रु प्रवाहित करने तथा उनके आनन्द में आनन्दित होने की कामना प्रकट करता है–

माँ! वही हृदय दे मुझको,
विकल हो उठे सुन आहें।
झर–झर निर्झर से झर उठे,
नयन–कण्ठ दोनों रोयें।
हँसू तभी जब जगत हँसे,
वर दे! सह सकूँ बिथाएँ।।[1]

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, किरण, पृष्ठ 3

आपकी मूल्यपरक कविताओं में मानवीय चेतना के प्रसार का प्रयास स्पष्ट देखा जा सकता है। प्रस्तुत संग्रह की 'मानव के प्रति' शीर्षक कविता इस हेतु देखी जा सकती है, कवि मानव को अंहकार और मद को त्यागकर सही अर्थ में मानव बनने की प्रेरणा देता है। लोभ, मोह, तृष्णा का परित्याग कर उसे सभी के प्रति प्रेम भाव अपनाने का वह उपदेश देता है वह स्पष्ट शब्दों में कहता है कि ये तेरे सांसारिक माया महल स्थाई नहीं है, समय जब परिवर्तित होगा तब ये सारे बिखर जायंगे। इसलिये–

फिर इस थोथी माया पर,
अहंकार क्यों करता है ?
इस माया–दीप–शिखा में,
शलभ बन क्यों जलता है ?[1]

'होली गीत' में वह समरसता की होली खेलना चाहता है। वह कहता है कि धनी, निर्धन, इस देश में सभी भेदभाव रहित होकर होली ,खेलते हैं, होली सबको गले मिलाकर एक रंग में रंग देने वाला भारतीय त्यौहार है–

कंचन बालों – कंगालों में भेद नहीं,
सब ही समान आज सब भाई–भाई।
मठ–मस्जिद, गिरजाओं–गुरुद्वारों में,
खेले हिन्दू–मुस्लिम–सिख औ ईसाई।।[2]

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, किरण, पृष्ठ 15
[2] वही, पृष्ठ 18

इसी कविता में कवि दीपावली को इस दृष्टि से निष्ठुर मानता है इसकी मान्यता है कि दीपावली तो धनिकों का ही पर्व है, कवि की यह पंक्तियाँ देखें–

धनिकों पर वह है प्रसन्न सर्वदा से,
भूखे श्रमिकों से रूठी रहती है।
कुछ घर आती, कुछ को तड़पाती वह,
तू सबको अपने रंग रंग लेती है।[1]

एक अन्य गीत में कवि, प्रत्येक मानव को संभल–संभल कर चलने की चेतावनी देता है। वह प्रत्येक मानव को चेताते हुए प्रतिकूल परिस्थितियों में भी आशावादी मानव बनकर चलने की प्रेरणा देता है। मानव की जीवन रूपी नौका तभी पार हो सकेगी, जब वह विषम झंझाओं का सामना करेगा–

तूफानों में अड़ना होगा,
लहरों से भी लड़ना होगा।
तीक्ष्ण हवाएँ भी आवेंगी,
उनसे भी तो लड़ना होगा।
आशावादी मानव बन कर,
आगे ही तू बढ़ता जाना।
धीरज अरु आशा मत खोना,
अवश्य विजय होगी तेरी।[2]

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा,किरण, पृष्ठ 19
[2] वही, पृष्ठ 20

सामाजिक वैषम्य से दु:खी होकर कवि 'आव्हान' शीर्षक रचना में गरीब और अमीर सभी को एक समान बनाने के लिये वह सबको पुकारता है। कवि का हृदय समाज में व्याप्त इस भेद–भाव की खाई को देखकर अत्यधिक दु:खी है। वह कहता है–

कहीं दूध कुत्ते पीते,
लोग तरसते टुकड़ों को।
कहीं गुद–गुदे गद्दे हैं,
कहीं तरसते चिथड़ों को।
अब इस गहरी खाई को,
आओ! सब मिलकर भरदो।।[1]

विश्व में युद्धोन्मत्त शक्तियों की विस्तारवादी नीति से कवि का हृदय काँप उठता है, वह विध्वंस नहीं, नव निर्माण का आकांक्षी है। प्रस्तुत संग्रह की 'ध्वंस नहीं नव निर्माण चाहिए' शीर्षक रचना में कवि ने ऐसी शक्तियों को ललकारते हुए, शांति का जो सन्देश दिया है, वह हृदयस्पर्शी है, ऐसी शक्तियों को ललकारते हुए कहता है–

जागो! मानवता के हत्यारो,
क्या लहू पियोगे मानव का ?
क्या माताओं की भरी गोद में,
तुम शोणित भर दोगे लालों का।।[2]

राष्ट्रीय चेतना के प्रसार के लिये कवि सभी देशवासियों में देशभक्ति की भावना का प्रसार करता है। वह संसार को

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, किरण, पृष्ठ 29
[2] वही, पृष्ठ 30

एटम–हाइड्रोजन की लपटों से मुक्त देखना चाहता है। नये प्रभात की स्वागत के लिये उसकी हर स्वांस उत्कंठित है। अपनी 'चीन के नाम पाती' रचना में क्षेत्र विस्तार के लिये भारत भू पर आक्रमण करने वाले चीन को भी स्पष्ट शब्दों में चेतावनी देता है कि वह इस भारत का हर वासी देश पर प्राण न्यौछावर करने में विलम्ब नहीं करेगा। भारत का बच्चा–बच्चा देश की रक्षा के लिये रणचंडी का आव्हान करेगा वह ओजस्वी शब्दों में चीन को चेतावनी देता है।

> इस भारत का हर बच्चा–बूढ़ा,
> है वीर भगत सिंह और आजाद।
> इनकी नशों में गर्म लहू बहता,
> भुजदण्ड और सीने हैं फौलाद।।[1]

वह चीन को सावधान करता है, कि तू अब भी संभल जा....... तू यह मत समझ कि भारतवासी वीर सोये हुए हैं।

इस प्रकार सामाजिक चेतना एवं राष्ट्रीय चेतना के प्रसार में प्रस्तुत संग्रह की कविताओं का मूल्य बहुत अधिक है। कवि का शब्द–शब्द सांस्कृतिक, नैतिक एवं मानवीय मूल्यों का संवाहक है।

Hk vkj [k d chp lc] ¼nkgk lxg] lu 2003½

'भू और ख के बीच सब' आधुनिक खड़ी बोली की सतसई परम्परा को अग्रसर करने वाला आपका खड़ी बोली के दोहों का एक संग्रह है। इस दोहा सतसई के संबंध में डॉ. बृजेश माधव लिखते हैं– ''लब्ध प्रतिष्ठित कवि डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा का दोहा संग्रह भू और ख के

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, किरण, पृष्ठ 8

बीच सब हिन्दी की प्राचीन सतसई परम्परा तथा मुक्तक पराम्परा में उनका अभिनन्दनीय योगदान है.....। प्रस्तुत संग्रह के अनेक दोहों में हमारे जीवन में रची–बसी अनेक सूक्तियों को अत्यन्त सहज काव्यात्मक रूप प्रदान किये जाने से मन की गहराईयों तक उनके पैठ सकने की सामर्थ्य में और भी वृद्धि हो सकी है।''[1]

संमीक्ष्य दोहा सतसई के दोहे अनेक शीर्षकों में विभक्त है, प्रथम शीर्षक 'प्रकाश की ओर' में संकलित दोहे आध्यात्म से संबंधित हैं। कवि की मान्यता है कि अध्यात्म ही हमारी संस्कृति का मूल आधार है। अध्यात्म के माध्यम से ही मानव के मन में नैतिक मूल्यों को उज्जीवित किया जा सकता है। कवि दोहों के माध्यम से आत्मतत्व को पहचानने का आग्रह करता है।

तन ही है सब कुछ नहीं, इसे आवरण मान।
आत्म तत्व मन में रहे, उसको तो पहचान।।[2]

'मातृभूमि ही स्वर्ग है' शीर्षक के दोहों में देशवासियों को मातृभूमि की महिमा से अवगत कराते हुए कवि ने देश में और देश के प्रजातंत्र में पनप रहे अनेक दूषणों की ओर भी ध्यान आकृष्ट किया है। प्रस्तुत दोहा अवलोकनीय है–

प्रजातंत्र के भवन में, घुस बैठी है फूट।
जाति, धर्म, भाषा, लड़े, कैसे रहे अटूट।।

देश में भृष्टाचार परिव्याप्त है, उसकी ओर कटाक्ष करते हुए कवि लिखता है–

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, भू और ख के बीच सब, प्रथम फ्लैप से
[2] वही, पृष्ठ 13

यहाँ–वहाँ हर ओर अब मची लूट ही लूट।
शुभ गागर रस प्रेम की, फूट गई पड़ फूट।।[1]

भारतीय समाज को अपने दोहों से कवि ने अनेक स्थलों पर चेताने का प्रयास किया है। 'मत हारे मन मीत' शीर्षक के अन्तर्गत दिये गये सभी दोहे मानव मन की शक्ति को और उसकी चेतना को चेताने का काम करते हैं। कवि मानता है कि मन ही हारता और जीतता है, किन्तु मन में यदि कुसंस्कार बलवान हो जाते हैं, तो मन की शक्तियाँ क्षीण होने लगती हैं। कुछ प्रतीकों के माध्यम से कवि ने मन की इस हीन स्थिति को इस प्रकार उजागर किया है –

मन में अब कैक्टस उगे, उगे बबूल, करील।
तृष्णा ने सब सोख ली, अन्तस की रस झील।[2]

कवि का विश्वास है कि प्रतिकूल परिस्थितियों में हारना नहीं चाहिए। हम भूल कर सकते हैं, यह स्वाभाविक है। परन्तु ऐसे अवसरों पर मन हमको सदैव चेतावनी देता है और यदि हमने उसकी अनदेखी कर दी तो फिर भूल होगी ही –

मन देता चेतावनी, बन्द रखे तू कान।
भूलों पर भूलें करें, इसका कहा न मान।।[3]

सामाजिक चेतना से ओतप्रोत प्रस्तुत संग्रह के दोहे मानव को हर दृष्टि से विकार रहित तथा क्रियाशील ही देखना चाहते हैं। प्रस्तुत दोहा देखें –

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, भू और ख के बीच सब, पृष्ठ 15
[2] वही, पृष्ठ 19
[3] वही, पृष्ठ 19

धूप पचाकर जो जिये, वह न कभी मुरझाय।
कच्चा मटका आँच तप, घट पक्का बन जाय।।[1]

कवि ने अभिमान को मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु माना है। वह मानता है कि अभिमानी कितना भी शक्तिशाली हो, किन्तु उसका अभिमान चूर–चूर हो जाता है, अभिमान के मूल में अज्ञान ही रहता है–

दुर्भिमानी का अवश्य, झुके एक दिन शीष।
रावण को न बचा सके, शंकर के आशीष।।[2]

प्रस्तुत संग्रह के प्रायः सभी दोहे किसी न किसी रूप में मानव मन को परिष्कृत करने, उसे ज्ञान के आलोक से परिपूर्ण करने तथा समाज और राष्ट्र के लिये आदर्श नागरिक बनाने की प्रेरणा देते हैं। वह मनुष्य को सेवाभावी रूप में देखना चाहता हैं प्रस्तुत दोहा देखें –

अचल बने तो कुछ नहीं, बनो विटप फलदार।
सबको दो छाया सुखद, दो फल का उपहार।।[3]

मानव को वह विनम्र और सदाचारी रूप में देखना चाहता है। डावाडोल चित्तवाला अस्थिर मन कभी सफल नहीं हो सकता। इसलिये कवि मानव से अपेक्षा करता है कि वह अपने लक्ष्य पर ही अपने मन की दृष्टि को केन्द्रित रखे और एकाग्र रहकर अपने लक्ष्य को साधता रहे। अहंकार के विष को त्याग कर जो मानव विनम्र बन जाता है। उसकी कवि प्रशंसा करता है, उसका विश्वास है कि विनम्र व्यक्ति ही ऊँचा उठता है। अतः वह कहता है–

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, भू और ख के बीच सब, पृष्ठ 21
[2] वही, पृष्ठ 22
[3] वही, पृष्ठ 24

छोटे से छोटे बनो, बड़े बनोगे अप।
विनयी ही ऊँचे उठे, छोड़ें अपनी छाप।।[1]

एकता, पारस्परिक प्रेम, भाईचारा जैसे सांस्कृतिक मूल्य समाज को शक्तिशाली बनाते हैं। कवि चाहता है कि देश का प्रत्येक नागरिक बुराईयों से दूर रहकर अपने आपको एक श्रेष्ठ मानव के रूप में प्रस्तुत करे वह मनुष्य को शिक्षा देता है –

बुरे कर्म का फल बुरा, होती नीची नाक।
कर्ववीर बनकर सदा, रखो लक्ष्य पर आँख।।[2]

'भू और ख के बीच सब' सामाजिक जागरण का एक ऐसा दस्तावेज है, जिसमें मनुष्य जीवन के प्रायः सभी पक्षों को कवि ने किसी न किसी रूप में स्पर्श किया है। सामाजिक, राजनीतिक या वैयक्तिक अथवा किसी भी अन्य क्षेत्र की कुरुपता को कवि ने अपने इन दोहों में तराशा है। वह शिक्षक–शिक्षार्थी, श्रम–श्रमपूत, छद्मविनय, चाटुकारी, कपूत, नागफनी मन में उगे, राजनीति धंधा बनी, कहाँ करे अभिमान, सबकी पतलीदाल, जातिवाद–महारक्षण इत्यादि शीर्षकों के अन्तर्गत दिये गये दोहे भी अत्यन्त सटीक हैं। ऐसे अनेक दोहे प्रस्तुत दोहों में संकलित हैं। जो सामाजिक जीवन के प्रायः हर क्षेत्र में चेतना का शंख फूँकने का कार्य करते हैं। ऐसे दोहों के संबंध में डॉ. चंद्रमोहन मजेजी ने उचित ही लिखा है– ''डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा के व्यंग्य वाणो में भी बहुत पैनी धार है। भृष्टाचार, राजनीति में गिरावट, दम्भ पाखण्ड, पद लिप्सा, जातिवाद जैसे विसंगतियों पर आपके प्रहार अचूक हैं। शिक्षक तथा विद्यार्थी, व्यापार, सेवा तथा ऐसे ही अन्यान्य विषयों पर आपके दो

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, भू और ख के बीच सब, पृष्ठ 29
[2] वही, पृष्ठ 29

टूक शैली में लिखित कटाक्ष झकझोर देने वाली है।''[1] समाज एक बहुत व्यापक संस्था है। मानव जीवन का हर पक्ष उससे संबद्ध रहता है। मनुष्यों से समाज बनता है और समाज को राजनीति ने अत्यधिक प्रभावित किया है। वर्तमान राजनीति का यथार्थ चेहरा डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की कविता रूपी दर्पण में भी यहाँ–वहाँ सरलता से देखा जा सकता है।

हींग लगे न फिटकरी, चमक रंग कुछ और
राजनीति धंधा बनी, आया कैसा दौर।।

राजनीति धंधा फला, फैला–पनपा जोर।
साहूकार बने पुंजे, प्रायः सारे चारे।।

कीचड़–सने वही करें, इसकी–उसकी जाँच।
आँगन को टेड़ा कहें, नहीं जानते नाच।।

इसलिये कवि कहता है–

साँसों में भी राम हैं, वाणी में भी राम।
राजनीति दल–नीति में , फँसो न हे अभिराम।।[2]

प्रस्तुत सतसई को वर्तमान सामाजिक सन्दर्भों में एक अत्यन्त प्रभावशाली रचना मानते हुए साहित्यकार श्री रामविलास शर्मा लिखते हैं– 'भू और ख के बीच सब' समकालीन तथ्यों का एक जीवन्त दस्तावेज है। कवि ने समाज के सभी वर्गों को और उनकी समस्याओं को अपने दोहों में बड़े निकट से देखा है। कवि ने समाज में नैतिक

[1] मासिक देवपुत्र, पृष्ठ 36
[2] मासिक 'रेन–बसेरा', जनवरी सन् 2007, पृष्ठ 14 तथा 15

मूल्यों की स्थापना के लिये विषय बोध भी कराया है। सदाचार बोधक दोहे भी हैं, जिनमें जीवन के उच्च एवं शाश्वत मूल्यों की स्थापना की गई है। इन विषयों के अलावा भी लेखक ने समाज के सभी वर्गों को ओर उनकी समस्याओं को उभारा है, चाहे वे शिक्षा के क्षेत्र से हों, श्रम से संबंधित हों, पारिवारिक हों, राजनीतिक हों अथवा आश्रम के क्षेत्र से जुड़ी हो......... सभी को आपने पूरी ईमानदारी के साथ उन पर अपने निष्कर्ष दिये हैं, जो प्रबोधक कहे जा सकते हैं।''[1]

^f=x/kk* ¼eäd lxg lu 2004½

प्रसिद्ध समीक्षक डॉ. श्याम निर्मम ने त्रिगंधा में संकलित डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की रचना को मानव जीवन के हर पक्ष से संबंधित बतलाते हुए मानवीय चेतना को जाग्रत करने वाला कहा है। इसमें विषयों की विविधता है और छोटे से छोटे, बड़े से बड़े विचार को बहुत सीमित शब्दों में अत्यन्त प्रभावशील ढंग से प्रस्तुत किया है। निश्चय ही ये मुक्तक प्रेरणादायी हैं, मानवीय हैं तथा इनसे कुछ न कुछ ग्रहण किया जा सकता है।[2]

त्रिगंधा के आरम्भ में पाँच चतुष्पदियाँ राष्ट्रप्रेम तथा राष्ट्रीय चेतना से परिपूर्ण है, जिन्हें पढ़कर पाठक के मन में राष्ट्रीयता की भावना उज्जीवित होती है। कवि ने भारत की माटी को चंदन कहकर हर पल उसका अभिनन्दन करने का आग्रह किया है–

माटी भारत की चंदन है,
हर–पल इसका अभिनन्दन है,

---

[1] दैनिक सांध्य समाचार, ग्वालियर, पृष्ठ 3, 3 जुलाई सन् 2003
[2] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, त्रिगन्धा, प्रथम फ्लेप

साँस–साँस ऋणी है इसकी,
तन–मन से इसका वन्दन है।[1]

एक अन्य मुक्तक में डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा ने देश–प्रेम को सर्वोच्च धर्म कहा है। आपने कहा है कि कर्तव्य से विमुखता तथा आचरण में बेईमानी सबसे बड़ी नीचता है और इसे कवि ने अधर्म कहा है।

देश–प्रेम ही सर्वोच्च धर्म है,
परस्पर प्रेम ही उसका मर्म है,
कर्तव्य नहीं, करे बेईमानी,
नीचता है यह, यही अधर्म है।।[2]

मानव मन को आलोकित कर देने वाले अनेक मुक्तक त्रिगंधा में पढ़ने को मिलते हैं, कवि चाहता है कि हम सभी परोपकार करें, दूसरों के मार्ग में कांटे न बोये और अपनी विशिष्ट पहचान बनाए–

औरों को जगाये, स्वयं कभी सोये नहीं,
बिरवा आम का रोपे, बबूल बोये नहीं,
सितारों के बीच, चंदा–सा चमकता रहे,
आदमी बह है, जो भीड़ में खोये नहीं।।[3]

ऐसा ही एक प्रेरक मुक्तक देखें –

बहती धार बनो, बँधी हुई झील नहीं,
पवन बनो, दीवाल में गड़ी कील नहीं,
सूरज से चाहे, होड़ा–होड़ी कर लो,

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, त्रिगन्धा पृष्ठ 17
[2] वही, पृष्ठ 17
[3] वही, पृष्ठ 20

बनो, तो हंस बनो, कौआ या चील नहीं।[1]

सभ्यता और संस्कृति से व्यक्ति के व्यवहार का गहरा संबंध होता है। कवि ने सभी से पारस्परिक प्रेमपूर्ण व्यवहार की अपेक्षा की है, वह मानता है कि यदि हम और का अनादर करेंगे तो हमारा भी मान खण्डित होगाा–

आदर देंगे, तो मिलेगा सम्मान,
अनादर करने पर होगा अपमान।
जगत के कुएँ में बोलेंगे जैसा,
बदले में वैसा सुनेंगे कान।[2]

सभी मनावैज्ञानिक मानते हैं कि बालक का मन निश्छल होता है और जो मन से साधु है, उसका मन चंचल नहीं होता, ऐसे व्यक्ति का मन छल–कपट से रहित होता है।[3]

कवि ने एक अन्य मुक्तक में अन्य चिन्तकों के समान ही जीवन में 'बात' को बहुत महत्वपूर्ण माना है, वह कहता है कि हम सभी को सोच–समझकर ही बात करना चाहिए, इस आशय का प्रस्तुत मुक्तक देखें–

बात ही बात में बात उखड़ आती है,
दबे घावों की सीमन उधड़ जाती है।
इसलिये बात करो, जरा सोच के करो,
बात ही बात में बात बिगड़ जाती है।[4]

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, त्रिगन्धा, पृष्ठ 20
[2] वही, पृष्ठ 22
[3] वही, पृष्ठ 28
[4] वही, पृष्ठ 31

आडम्बरपूर्ण जीवन को कवि ने सदैव हेय दृष्टि से देखा है। उसने मनुष्य को उसकी मनुष्यता के आधार पर सदैव सम्मान दिया है –

चमकते काँच को मोती नहीं मानता हूँ,
जो सच है, केवल उसी को सच मानता हूँ,
आकाश को मुट्ठी में भर लिया हो भले ही,
आदमी को आदमीयत से पहचानता हूँ।[1]

त्रिगंधा में इस प्रकार की मन पर अपनी छाप छोड़ने वाली अनेक चतुष्पदियाँ हैं। इस संबंध में डॉ. कल्पना शर्मा ने उचित ही लिखा है– ''त्रिगंधा की चतुष्पदियों में देश–प्रेम, मानवीय उच्चादर्श, नैतिकता, सच्चाई, कर्तव्यनिष्ठा, भ्रातत्व, सदाचरण, समता जैसे उत्कृष्ट मूल्यों की महत्ता दिखाई गई है, वही छल–कपट, ईर्ष्या, द्वेष, पाखण्ड, दुराचार, भृष्टाचार, लूट–खसोट जैसे राजनीति, सामाजिक जैसी विकृतियों पर तीक्ष्ण प्रहार भी किये गये हैं। इन मुक्तकों की सर्वप्रथम विशेषता, इनकी सहज बोधगम्यता है। बात को बिना घुमाउ, फिराउ के सीधे–सीधे अत्यन्त सरल शब्दों में एक अत्यन्त सहज लहजे में कह दिया गया है। ऐसे सभी मुक्तक नैतिक चेतना और सहज जीवन की मूल्यवान चेतना से पूरी तरह लबालब हैं।[2]

चतुष्पदियों के अतिरिक्त त्रिगंधा में अनेक मुक्तिकाएँ भी मर्म को छूने वाली हैं। डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा का छन्द मुक्त में छोटी कविताएँ वस्तुतः क्षणिकाएँ ही हैं। इन मुक्तिकाओं में भी सामाजिक जीवन से संबंध अनेक विषयों को कवि ने समेट लिया है। इन मुक्तिकाओं में भी कवि ने भृष्टाचार, राजनीति प्रदूषण, कदाचार तथा धर्म–अधर्म एवं

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, त्रिगन्धा, पृष्ठ 31
[2] मासिक लोकयज्ञ, वीड, महाराष्ट्र, मार्च 2005, पृष्ठ 19

संस्कृति के अपकर्ष और उसके दुष्प्रभावों को प्रस्तुत किया है, डॉ. सुखदेव सिंह सेंगर के शब्दों में यह प्रस्तुति सहज होने के साथ–साथ प्रभावी और झकझोर देने वाली है। फिर भी चिकने घड़े के सदृष्य मन मस्तिष्क वाले किसी पाठक के लिये यह दावा नहीं, परन्तु अपेक्षा अवश्य है। हर व्यक्ति से कवि ने इन रचनाओं के माध्यम से कुछ करने की अपेक्षा की है, क्योंकि मानवीय व्यवहार और समृद्धि सभी देश से ही है, जिसे अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाना हमारा कर्म और धर्म है। ऐसी रचनाएँ जीवन्त चेतना की सूत्रकार है।''[1]

कवि ने सूक्ष्म कलेवरीय ऐसी मुक्तिकाओं में सामाजिक चेतना के अत्यन्त गम्भीर निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं, कवि मानता है कि जीवन में मानव अपनी भावनाओं के अनुसार मचलकर दिखावटी कर्म करता है तथा उसने अपने जीवन में धन को ही सब कुछ मान लिया है, 'अर्थ बोध' शीर्षक एक मुक्तिका अवलोकनीय है–

भावनाएँ
बिना पानी के मेघ
आदर्श
हाथी के दिखावटी दाँत
अब तो–
अर्थ है बस अर्थ का[2]

[1] मासिक आउट पोस्ट, भिण्ड, पृष्ठ 43
[2] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, त्रिगन्धा, पृष्ठ 54

ऐसे ही एक अन्य मुक्तिका देखें–

तब व्यवसाय में भी–
थी सेवा
अब सेवा ही
बन गई है व्यवसाय।[1]

भृष्टाचार पर तीक्ष्ण प्रहार करने वाली एक मुक्तिका देखें–

जो काम न हो सके
बुद्धि से– युक्ति से
वह होगा अवश्य
काम के अनुरूप भेंट–पूजा से
क्योंकि आज के
हर ताले की चाबी यही है।[2]

'त्रिगंधा' में संकलित 'कुदृष्ट' शीर्षक मुक्तिका में आधुनिकता के रंग में रंगी हुई नवयौवनाओं पर भी व्यंग्य किया है। व्यंग्य देखें–

शिकायत है उनकी कि–
लोग डालते हैं कुदृष्टि उन पर
किन्तु सच तो यह है कि–
उनके अध–उधड़े अंग
और नशैलियों जैसी चाल–ढाल ही
उकसाते हैं कुदृष्टियों को।[3]

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, त्रिगन्धा, पृष्ठ 61
[2] वही, पृष्ठ 63
[3] वही, पृष्ठ 65

डॉ. कल्पना शर्मा ने अपने समीक्षात्मक लेख में लिखा है–

'मुक्तकों के समान ही त्रिगंधा की मुक्तिकाएँ भी अनमोल हैं। डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा ने मुक्तक छंद में रचित छोटी कविता को क्षणिका या ऐसा ही कोई अन्य नाम न देकर 'मुक्तिका' कहा है, जो हर दृष्टि से संगत है। डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की ऐसी मुक्तिकाओं में सहजता, सार्थकता तथा व्यंजकता दर्शनीय है।''[1]

'त्रिगंधा' में मानवीय चिन्ताओं तथा सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्यों में गिरावट को लेकर कवि हृदय बहुत दुःखी है। प्रस्तुत संग्रह में संकलित दोहे, जीवन मूल्यों के प्रति मानव चेतना को जाग्रत करने के उद्‌देश्य से लिखे गये हैं। कोटा के कविवर रामेश्वर शर्मा ने त्रिगंधा के दोहों के संबंध में डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा को लिखित एक पत्र में अपनी काव्यमय प्रतिक्रिया इस प्रकार भेजते है। आप लिखते हैं –

अष्टावक्री ज्ञान समाया, अष्टभुजा शक्ति के साथ,
अष्टगंध का गंधायन है, यह त्रिगंधा पंडित जी।
ओतप्रेत है राष्ट्र वेदना, संस्कार की चिंताएँ,
खूब चली है कलम आपकी, हो निर्द्वन्द्वा पंडित जी।

कुछ और पंक्तियाँ भी देखें–

पिण्डखजूरी लगते दोहे, मिश्री जैसी चतुष्पदीं,
नवल मुक्तिका लगीं मुझे तो, शक्करकन्दा पंडित जी।
सच कहता मैं, एक बार जो पढ़ लेगा इस पोथी को,
लगने उसको सहज लगेगा, यम का फंदा पंडित जी।

[1] मासिक 'लोक यज्ञ' वीड महाराष्ट्र, मार्च 2005, पृष्ठ 19

'रामू भैया' सच कहते हैं, कविवर कृष्णमुरारी जी,

अक्षर–अक्षर पढ़ कर पाया, अति आनन्दा पंडित जी।[1]

दोहा कबीरदास जी के काल से भी बहुत पहले से सामाजिक– सांस्कृतिक चेतना के संवाहक के रूप में संतों द्वारा व्यवहार में लिया गया, एक बहुप्रयुक्त छन्द है। त्रिगंधा में संकलित, प्रो. शर्मा के दोहे भी ऐसी ही चेतना के प्रसारक – संवाहक हैं। डॉ. श्याम निर्मम ने एक समीक्षात्मक लेख में लिखा है– ''इन दोहों में दुनिया जहान की बातें समाई हुयीं हैं। 'आधार', 'सार', 'विविध' के अन्तर्गत ये तमाम दोहे अपनी पूरी सिद्दत और सामर्थ्य के साथ अपनी विविध भंगिमाओं में रूबरू होते हैं। इनमें पांडित्य का कोई लेपन नहीं है तथा भाव विचार तथा अनुभव तीनों एक साथ मुखर होकर हमें झकझोरते हैं।''[2]

'त्रिगंधा' के दोहे कम से कम शब्दों में पूरी बात कहते हैं, ऐसे दोहों का मन पर गहरा प्रभाव देखने को मिलता है। 'निर्दलीय' के सम्पादक श्री कैलाश श्रीवास्तव 'आदमी' ने त्रिगंधा की समीक्षा करते हुए लिखा है– ''कवि दोहा लेखन में तो वास्तव में सिद्धहस्त है ही, उनकी दोहों की एक पुस्तक 'भू और ख के बीच सब', पूर्व में प्रकाशित हो चुकी है। उसके बाद उनके '237' दोहे, त्रिगंधा में समाविष्ट हैं, उनके प्रत्येक दोहे ने मुझे प्रभावित किया है।''[3]

सुप्रसिद्ध चिंतक, असंख्य दोहों के रचयिता पद्म भूषण स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरि ने भी 'त्रिगंधा' का स्वागत करते हुए संकलित दोहों को सटीक, प्रेरक, प्रभावी माना है। आप लिखते हैं– ''दोहे भक्ति,

---

[1] श्री रामेश्वर शर्मा 'रामू भैया' कोटा द्वारा प्रो. शर्मा को लिखित 19 मार्च सन् 2005 के पत्र से
[2] त्रैमासिक चिरंनतन, अक्टूबर–दिसम्बर, 2004, पृष्ठ 33
[3] निर्दली, साप्ताहिक 20 से 26 मार्च 2005, भोपाल, पृष्ठ 9

आध्यात्मिकता और परमात्मा–प्रेम से परिपूर्ण हैं। मानवीय दुर्बलताओं को भी दोहों के द्वारा प्रगट करने में कवि हृदय के प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में सुधार के लिये पर्याप्त सन्देश दिये गये हैं। सम्पूर्ण कृति साहित्य की धरोहर बन गई है।''[1]

'त्रिगंधा' में जीवन–जगत से संबंधित अनेक दोहे मानव मन को अपने रंग में रंजित करने में सक्षम हैं। 'आधार' शीर्षक के अन्तर्गत मानव को स्वार्थों के संकुचित घेरे से उबारने की प्रेरणा देने वाले कुछ दोहों को उदाहरण स्वरूप देखें–

राम सभी कुछ जानते, राम सभी के पास।
दुःख–पल उनके ही दिये, देते वे उल्लास।।[2]

मेरे राम अलग नहीं, सबके वे ही राम।
ईश कहो, रहीम कहो, दो चाहे जो नाम।।[3]

'त्रिगंधा' के कवि ने समाज में व्याप्त ऊँच–नींच की भावना को सर्वथा अनुचित कहा है, कवि ने कर्म की कसौटी को ही इसका एक मात्र आधार माना है, कवि सभी से सत्कर्मों में रहने का आग्रह करता है। वह सभी सामाजिकों से प्रेम की भावना के साथ जीवन–यापन की आशा करता है, दोहा देखें–

जन्म–पत्र को देख मत, कर कर्म–पत्र मिलान।
सुख–दुःख सारे कर्म–फल, बस रख इतना ध्यान।।[4]

---

[1] स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरि जी द्वारा 17 दिसम्बर 2004 को प्रो. शर्मा को लिखित पत्र से
[2] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, त्रिगन्धा, पृष्ठ 71
[3] वही, पृष्ठ 72
[4] वही, पृष्ठ 76

प्रतिकूल परिस्थितियों में वह मानव को साहस से उन सबको लड़ने की प्रेरणा देता है–

पीड़ा से हारो नहीं, ललकारो हर बार।
धीरज–साहस से सहो, उनके सभी प्रहार।।[1]

शंकर बन पीते रहो, पीड़ा का विष–ताप।
कहने पर होगी हँसी, सहो सदा चुपचाप।।[2]

संसार अपने विविध आकर्षणों में मानव को फँसा लेता है और मनुष्य उसके आकर्षक झूलों में जीवन भर झूलता रहता है। इसलिये मनुष्य को कवि बार–बार चेताता है–

बहुत दिनों तक सो लिया, चेत बाबरे चेत।
तब जागा किस काम का, उजड़े जब सब खेत।।[3]

कवि मानता है कि जीवन रूपी उपवन को मानव अपने सदाचार से हरा–भरा बना सकता है। इसलिये मानव को तृष्णा, लालच, ईर्ष्या, द्वेष से अलग रहकर सबके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करना चाहिए–

जीवन मानव का मिला, बाँटे सबको प्यार।
मेरा–तेरा कुछ नहीं, सबका सभी उधार।।[4]

लालच की सीमा नहीं, नहीं बैर का अन्त।
जो इनसे ऊपर उठे, वह मानव ही सन्त।।[5]

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, त्रिगन्धा, पृष्ठ 77
[2] वही, पृष्ठ 77
[3] वही, पृष्ठ 78
[4] वही, पृष्ठ 78
[5] वही, पृष्ठ 79

सभी को कवि सात्विक जीवन की प्रेरणा देते हुए लिखता है–

आँधी बनना सरल है, बनो विमल आकाश।
सूरज बन देते रहो, सबको नवल प्रकाश।।

गंगा से पावन बनो, सागर से गम्भीर।
कोयल बन गाते रहो, सबके मन की पीर।।[1]

'त्रिगंधा' के 'विविध' शीर्षक के अन्तर्गत दिये हुए दोहे भी पूर्ण रूपेण चेतना परक हैं। आपने सामाजिक जीवन की विद्रूपताओं पर प्रस्तुत दोहों में सीधे–सीधे प्रहार किये हैं। आज के सामाजिक जीवन के मानव की निष्ठाएँ खण्डित हो चुकी हैं, नैतिकता पूरी तरह विलुप्त हो चुकी है, व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में स्वार्थान्धता तथा पापाचार इतना बढ़ गया है कि जीवन दूभर लगने लगा है–

जीवन जीना है कठिन, बड़ा कपट–आचार।
अमृत कह कर जहर दे, कैसा है संसार।।

अपने ही अब छल करें, औरों की क्या बात।
वध कर दे धन के लिये, कौन बंधु या तात।।

एक अन्य व्यंजक दोहा देखें–

निष्ठाएँ खण्डित हुईं, पसरा पापाचार।
सिंदूर भरी माँग भी, करती आँखें चार।।[2]

कवि ने 'त्रिगंधा' के दोहों में व्यक्ति–जीवन के अतिरिक्त राजनीति के कुरुप चेहरे को भी बेनकाब करने में कोई कसर नहीं छोड़ी

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, त्रिगन्धा, पृष्ठ 79
[2] वही, पृष्ठ 86

है, कवि ने माना है कि आज की राजनीति स्वार्थों की गठजोड़ की है, उसके मूल्य में कपट तथा व्यक्तिगत लाभ अर्जित करने का मोह सर्वत्र देखने को मिलता है, कवि का मानना है कि राष्ट्रीय चरित्र का पतन देश की दुर्दशा का मूल कारण है। कुर्सी की दोडें चल रही हैं– कुर्सी पाने के लिये सारी तिकड़मों के खेल हो रहे हैं, आज के प्रजातंत्र की विधायिकाओं तथा राष्ट्र की संसद तक में ऐसे लोग ज्यादा पहुँच रहे हैं, जो समाज सेवा के बजाय अपने व्यक्तिगत लाभ को ही प्रमुखता दे रहे हैं। बाहूबली और धनवान ही आज की राजनीति के खिलाड़ी हैं। संसद तथा विधायिकाएँ जनसेवा के मन्दिर न होकर दंगल का रूप ले चुके हैं, हफ्तों तक काम के बजाय व्यर्थ के वाक्युद्ध देखे जा सकते हैं।

इस सन्दर्भ में 'त्रिगंधा' के कुछ दोहे देखें–

संसद तक में अब मचे, सारे दिन कुहराम।
दंगल सा होता रहे, कैसे लगे लगाम।।

वाक्युद्ध जब विफल हों, लेते घूँसे तान।
गर्भ गृह भी रोंदते, संसद–पूत महान।।

विधायिका महिमा घटी, योग्यता–अपमान।
ठोकें ताल बाहुबली, कहाँ बचे सम्मान।।[1]

कवि के व्यवहारिक अनुभव से संबंधित अनेक दोहे भी त्रिगंधा को पूर्णता प्रदान करते हैं, कवि ने ऐसे दोहों में व्यक्ति की चाल, चरित्र के अतिरिक्त उसके पारिवारिक जीवन के संबंध में भी अनेक दोहे लिखे हैं, जो सामाजिक चेतना, व्यक्ति चेतना की सशक्त कड़ी माने जा सकते हैं। समाज में आरक्षण नीति के कारण अगड़ी पिछड़ी जातियों में

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, त्रिगन्धा, पृष्ठ 89

वैमनश्य पनप रहा है, कवि ने कुछ दोहों में आरक्षण के बजाय संरक्षण नीति को उचित माना है। कवि का कहना है कि समाज के जो भी पिछड़ी जातियों के लोग हैं बिना जातिगत भेद भाव के संरक्षण मिलना चाहिए।''[1] कवि ने व्यक्तिगत जीवन में शुचिता–ऋजुता को सामाजिक तथा राष्ट्रीय उन्नति के लिये अत्यन्त आवश्यक माना है। आज के आदमी को वास्तविक आदमी बनने का आदेश, प्रस्तुत दोहों में जहाँ–तहाँ देखने को मिलता है। आज आदमी इतना सस्ता हो गया है कि जीवन मूल्यों की परवाह ही नहीं करता–

केवल सस्ता आदमी, महँगा सब कुछ और।
जीवन की कीमत नहीं, मूल्य बचे किस ठौर।।[2]

ऐसे अनेक दोहे 'त्रिगंधा' की धरोहर हैं, इस प्रकार के दोहे सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना के प्रसार में बहुमूल्य योग दे सकते हैं, ऐसा विश्वास है।

^ih;f"kdk] ¼nkgk lxg] lu 2006½

पीयूषिका भक्ति, अध्यात्म तथा नीति परक दोहों की एक ऐसी त्रिवेणी है, जिसमें अवगाहन करने पर आत्मिक आनन्द की अनुभूति होती है। पीयूषिका के दोहे भक्ति रस में रचे–पगे हैं। आज जिस द्रुतगति से मानवीय मूल्यों का क्षरण हो रहा है, वह चिन्ता का विषय है। आज का आदमी स्वार्थों में आकण्ठ डूबा हुआ है और अपने स्वार्थ को पूर्ण करने के लिये वह किसी भी सीमा तक नीचे गिर सकता है। उसे न देश की चिन्ता है, न समाज की ऐसे विषम समय में नैतिक चेतना तथा

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, त्रिगन्धा, पृष्ठ 90
[2] वही, पृष्ठ 91

अध्यात्मिक प्रकाश से ही मानव को उचित रास्ते पर लाया जा सकता है। आज व्यक्ति का कर्तव्यबोध विलुप्त हो चुका है तथा वह भटककर बिना नीति–अनीति की चिन्ता किये पतन के गर्त में समाता जा रहा है। कामान्धता, मदान्धता, तृष्णा, पिपासा ने उसे ज्ञान शून्य बना दिया है। वह विवेकशून्य होकर भृष्टाचार, कदाचार, पापाचार में लिप्त होता जा रहा है। इस नैतिक पतन से उसे बचाने के लिये अध्यात्म ही अचूक उपाय दिखलाई पड़ता है। इसी दृष्टि से पीयूषिका के दोहे बहुत मूल्यवान प्रतीत होते हैं, ऐसे विषम समय में नैतिक एवं आध्यात्मिक उच्चादर्शों को समाज के समक्ष प्रस्तुत करने वाली यह पीयूषिका निश्चय ही बहुत मूल्यवान है। सारे विश्व में नैतिक चेतना तथा आध्यात्मिक आलोक की मशाल प्रज्वलित करने वाले महान संत पदम भूषण स्वामी सत्यमित्रानन्द जी ने पीयूषिका के दोहों को हृदयस्पर्शी तथा प्रेरक कहा है– ''स्वामी जी का विश्वास है कि इन दोहों के पाठन से मानसिक शांति मिलेगी।''[1] स्वामी जी ने लिखा है कि जब प्रेम पूजा बन जाता है तब वह भक्ति का रूप धारण कर लेता है। आज के युग में घृणा, आतंक, असूया, द्वेष, इतदि की दुर्गन्ध ने ईश्वर की इस संसार रूपी बगिया को कुवाशित कर दिया है।

सर्वभूत दया, सर्वधर्म, संभाव, ब्रह्म का सर्वत्र दर्शन करते हुए एक नये अनन्दमय जगत का पुनः निर्माण किया जा सकता है। पूज्य स्वामी जी मानते हैं– ''मानव परमात्मा की सर्वोत्कृष्ट कृति है, उसको दुलार, स्नेह, आत्मीयता, आदर, सम्मान और हार्दिक सद्भाव मिलना चाहिए। स्वामी सत्यमित्रानन्द गिरि जी मानते हैं कि आज के समय में

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, पीयूषिका – आशीर्वचन से

प्रेम, भक्ति, अध्यात्म एवं नैतिक मूल्यों के प्रचार–प्रसार की बहुत आवश्यकता है।[1]

'पीयूषिका' के कवि ने स्वयं को भक्त न मानते हुए भक्ति अध्यात्म परक कई दोहों की रचना की है, ऐसे दोहों से मन में पावन सात्विक विचारों का उद्वेग होता है, यही कवि कर्म की सार्थकता है।

'पीयूषिका' में कवि ने दोहों को पन्द्रह शीर्षकों में विभक्त किया है, 'चेत बावले' शीर्षक के अन्तर्गत कवि ने मानव मन को चेताने के लिये कुछ दोहे प्रस्तुत किये हैं, कवि कहता है–

देह–गेह में सो रहा, चेत बावले चेत।
कट न सके जग–फन्द यह, यदि यों रहा अचेत।।

इसलिये कवि मनुष्य को सीधे–सीधे राम–रस में निमग्न होने की प्रेरणा देता है–

झड़ जायेगा एक दिन, जैसे डाली–पात।
मर्म समझ यह चेत जा, छोड़ सभी उत्पात।।[2]

कवि ने संसार में खोये हुए– भटकते हुए मनुष्य को बार–बार चेताया है, वह कहता है कि इस संसार में – अपने घर तथा परिवार में मनुष्य अनेक प्रकार के अन्याय सहता है। उसे सही न्याय पाने के लिये राम की कचहरी में ही जाना चाहिए। सांसारिक संबंध तो जुड़ते–टूटते रहते हैं, इसलिये उसे अपने प्रभु से ही जुड़ना चाहिए।[3] कवि ने अन्य सन्तों के समान ही इस संसार को सुख–दुःखमय माना है तथा यहाँ के नाते–रिश्तों को भी अविश्वसनीय ही कहा है–

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, पीयूषिका अन्तर्मन की बात से
[2] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, पीयूषिका, पृष्ठ 18
[3] वही, पृष्ठ 19

सुख–दुःखमय संसार यह, रचना बड़ी विचित्र।
हर प्राणी स्वार्थी यहाँ, कोई बंधु न मित्र।।[1]

'पीयूषिका' के कवि ने मनुष्य जीवन को तथा इस जीवन में उसे प्राप्त सुख–दुःख को अन्य सन्तों के समान ही उसके कर्मों का फल माना है, यहाँ कवि की दृष्टि परम्परागत ही है। फिर भी वह सभी से सोच–समझकर चलने तथा अच्छे कर्म करने का ही आग्रह करता है। ''फल मिले वैसा ही, बोये जैसा बीज'' में कवि का आशय स्पष्ट है।[2] पीयूषिका में 'मन' शीर्षक के अन्तर्गत अनेक दोहों में मनुष्य को अनेक दोहों में निर्मल बनाने का आग्रह किया है, मन रूपी रावण को राम नाम के बाण से वेधने के आग्रह के साथ कवि कहता है–

राम–नाम के वाण से, मन–रावण को वेध।
मर्कट सा नाचा अगर, हाथ लगेगा खेद।।[3]

मन में भरे विकार जब, रहें दूर ही राम।
जब तक मन पावन नहीं, बने नहीं प्रभु–धाम।।[4]

कवि ने 'पीयूषिका' के दोहों में सामाजिक जीवन में प्रेम, सद्भाव, करुणा, दया, सहानुभूति जैसे उच्च मानवीय गुणों को सभी से हृदय में धारण करने की अपेक्षा की है, इसीलिये वह दुःखियों के आँसू पौंछने एवं उनकी सेवा करने का आग्रह करता है। दुःखी व्यक्ति की सेवा करने वाले व्यक्ति को कवि ने नारायण के समान माना है, क्योंकि सभी प्राणी ईश्वर के हैं और उन्हें किसी भी रूप में कष्ट देना उचित नहीं

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, पीयूषिका, पृष्ठ 20
[2] वही, पृष्ठ 21
[3] वही, पृष्ठ 23
[4] वही, पृष्ठ 25

माना जा सकता। 'पीयूषिका' में संकलित 'सेवा' शीर्षक के अन्तर्गत प्रस्तुत दोहों का यही अभिप्रायः है।[1]

'पीयूषिका' में दोहाकार ने सांसारिक माया मोह में तथा मोहजन्य अज्ञान तथा आसक्ति से विलग रहने का सभी सामाजिकों से आग्रह किया है। 'अज्ञान–आसक्ति' शीर्षक के अन्तर्गत इस प्रकार के अनेक प्रेरक दोहे पढ़ने को मिलते हैं, जो सांसारिक भोग–वासना से मनुष्य को दूर रहने का उपदेश देते हैं। यह उदाहरण देखिये–

कनक–कामिनी में उलझ, उमर रही सब बींत
जीवन–घट हर साँस में, व्यर्थ रहा यों रीत।।

सोता ही सोता रहा, आया तुझे न होश।
जीवन–धन सब लुट गया, है फिर भी बेहोश।।[2]

देश के महान संतों ने सभी से निराभिमानी होने का अनुरोध किया है, वैसी ही इच्छा यहाँ कवि ने की है, 'दम्भ–अहंकार' शीर्षक के अन्तर्गत प्रस्तुत कुछ दोहे कवि ऐसे ही उद्‌गारों को स्पष्ट करते हैं।[3]

'पीयूषिका' के दोहाकार ने पाप और पुण्य को परिभाषित करते हुए लिखा है कि सभी से ऊँच–नीच, क्या धनी–निर्धन के आधार पर भेदभाव करना उचित नहीं है, क्योंकि प्रकृति भी किसी से भेद नहीं करती न सूर्य भेद करता है, और न ही पवन किसी के साथ भेदभाव रखता है। सीधे–सीधे पाप–पुण्य कवि के अनुसार यह हैं–

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, पीयूषिका, पृष्ठ 27–28
[2] वही, पृष्ठ 29
[3] वही, पृष्ठ 32

सबको सुख दे, पुण्य है, दुःखी करे सो पाप।
दुःखता जी जब और का, मिलता है तब शाप।।[1]

रीति–नीति, सदाचरण के अन्तर्गत प्रस्तुत किये गये दोहे भी जीवन मूल्य परक चेतना का प्रसार करते हैं, कवि का अटल विश्वास है कि नीति मार्ग पर चलने से उत्कर्ष होता है, एक दोहा देखें–

नीति–धर्म–पथ पर चले, होता है उत्कर्ष
पाते हैं सभी अधर्मी, रावण सा अपकर्ष।।[2]

मानव को हर पल जागते रहने का आग्रह कवि ने अनेक दोहों के माध्यम से किया है, क्योंकि सबका काल निकट है –

बहुत सो लिया जाग अब, देख निकट है काल।
अब भी यदि चेता नहीं, पड़ी रहेगी खाल।।[3]

कवि ने असफलता को भी विजयश्री पाने के लिये एक प्रेरणा माना है। इसमें कहाँ है, कि मन जब भी निराश हो तब प्रभु का नाम लेने मात्र से उसके मन में शक्ति का संचार हो सकता है–

हार द्वार है जीत का, बैठ न जाना हार।
हारे मन जब भी कहीं, लेना नाम पुकार।।[4]

इस प्रकार 'पीयूषिका' के 'मंगलाचरण' से लेकर रीति–नीति, सदाचरण तथा शेष–अशेष तक प्रस्तुत 'पीयूषिका' के प्रायः सभी दोहों में जीवन मूल्यों का आलोक, भक्ति, ज्ञान, सद्भाव, कर्तव्यबोध जैसी श्रेष्ठ

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, पीयूषिका, पृष्ठ 34
[2] वही, पृष्ठ 35
[3] वही, पृष्ठ 35
[4] वही, पृष्ठ 38

प्रेरणाएँ स्पष्ट देखी जा सकती हैं। कुल मिलाकर भारतीय संस्कृति और नैतिक मूल्यों की एक अत्यन्त समृद्ध धरोहर है 'पीयूषिका' इसके हर दोहे में कुटिलता का परित्याग कर ऋजुता–शुचिता धारण करने की प्रेरणाएँ सन्निहित हैं। दोहों में सरल विचारों के अनुरूप सरल सुबोध भाषा का प्रयोग हुआ है और इस कारण प्रस्तुत कृति का अभिप्रायः ग्रहण करने में किसी को कठिनाई नहीं हो सकती। इस कृति के संबंध में प्रसिद्ध दोहाकार डॉ. स्वामी श्यामानन्द सरस्वती ने अपने एक पत्र में अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए पीयूषिका के कवि के प्रति सम्मान प्रकट करते हुए लिखा था–

कृष्णमुरारी नाम है, अच्छे दोहाकार।
कदम–कदम पर आपको, मिले मान सत्कार।।[1]

^tUetkr fo"kik;h Bgjs* ¼dkO; laxzg lu~ 2012½

'जन्मजात विषपायी ठहरे' डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की प्रौढ़ अवस्था की काव्य कृति है। अतः संकलित कविताओं में कवि का चिंतन प्रौढ़स्तरी है तथा इसके अनुरूप अभिव्यक्ति उतनी ही प्रौढ़ एवं परिमार्जित है। प्रस्तुत संग्रह की कविताओं में सामाजिक सांस्कृतिक चेतना के अतिरिक्त राष्ट्रीय चेतना, व्यक्ति चेतना तथा कह सकते हैं कि व्यष्टि और समष्टि चेतना इन रचननाओं का प्रमुख स्वर है।

कवि ने इन कविताओं को ''मन से मन का सीधा संवाद कहा है'' कवि ने संकलन की भूमिका में अपना प्रयोजन स्पष्ट करते हुए लिखा है–''देश और आदमी ही मेरी समस्त चिंताओं के केन्द्र हैं सदैव से रहे है।। विगत लगभग पाँच दशकों में आम आदमी तथा राष्ट्र से

[1] 'काव्य गंगा' के प्रधान सम्पादक डॉ. स्वामी श्यामानन्द सरस्वती द्वारा, प्रो. शर्मा को लिखित दिनांक 30.08. 2005 के पत्र से

संबद्ध तमाम मीठे–कड़वे अनुभव, उतार–चढ़ाव, हर्ष–विषाद, आँसू–उमंग और ऐसा ही सब इन कविताओं के रूप में जब–तब प्रकट हुआ है।''[1] कवि आगे लिखता है मन में भाव तरंगों में जब जैसी करवट ली तब वैसी रचना लिख गई, भावधारा कभी छन्द में बह चली है तो कभी छन्द अनुशासन, अमान्य कर छन्द–मुक्त स्वरूप सामने आई है। आपने कुछ गजलें भी लिखी हैं, यहाँ उनमें से गजलों का भी रसास्वादन कर सकेंगे, कुछ कविताएँ देश में गत समय में घटित आतंकी घटनाओं, निखारी काण्ड, गुजरात की भू–कम्प त्रासदी इत्यादि के विशिष्ट सन्दर्भों में भी लिखित है। सामान्यतः नैतिक–सांस्कृतिक अवमूल्यों, व्यक्ति चरित्र में गिरावट, भृष्ट दूषित राजनीति, भृष्टाचार अराष्ट्रीयता आदि के प्रति आपकी चिन्ता, छोभ, आक्रोश इन कविताओं में प्रगट हुआ है। देश–प्रेम, सेवा, त्याग, अध्यात्म, समरसता, सौहार्द जैसे आदर्श मूल्यों के प्रति आपकी आस्था जहाँ–तहाँ अभिव्यक्ति पाती रही है।''[2] एक हिन्दी गजल ''चाँदनी बन खिर जाएँ'' में कवि मानव से कंचन की तरह शुद्ध बनने का आग्रह करते हुए लिखता है–

तपन तपकर कंचन से निखर जाएँ।
जलन तज कर चंदन से सँवर जाएँ।।

अन्धा परिवेश, आकाश तक काला,
चलो, रोशनी की नई लहर लाएँ।।[3]

ऐसी ही एक हिन्दी गजल में कवि ने स्वीकार किया है कि आज का आदमी अत्यधिक व्यस्त होने के कारण अस्त–व्यस्त हो गया है, जो आदमी कभी सूर्य से स्पर्धा करता था वह आज क्यों अस्त हो

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, जन्मजात विषपायी ठहरे ''मेरी ये कविताएँ'' से पृष्ठ 6
[2] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, जन्मजात विषपायी ठहरे, पृष्ठ 6
[3] वही, पृष्ठ 43

गया है, कवि की ऐसी ही चिन्ता सम्पूर्ण गजल में अभिव्यक्त हुई है, प्रस्तुत गजल की चंद पंक्तियाँ अवलोकनीय हैं –

शीर्षक–विहीन कहानी सा,
स्वयम् से त्रस्त है आदमी।

हवा बदले, रंग बदल लेता,
मौका–परस्त है आदमी।[1]

प्रस्तुत संग्रह की 'जन्मजात विषपायी ठहरे' गजल को संग्रह की प्रतिनिधि गजल कहा जा सकता है। इस गजल में कवि ने आत्म गौरव के साथ भी कवि हृदय की सर्व व्यापकता तथा संवेदनशीलता को अत्यन्त प्रभावी ढंग से व्यक्त किया है। कुछ द्विपदियाँ देखें–

नयी सुबह खोजते फिरते,
पीटी कभी न पिटी लकरी।

दर्द सभी का अपना लगता,
हर सिसकी से हुए अधीर।

जन्मजात विषपायी ठहरे,
पचा गये अपनी सब पीर।

खाली हाथ रहे तो क्या,
बाँटा चंदन और अबीर।

सूरज के उत्तराधिकारी,
तिमिर हरण अपनी तासीर।[2]

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, जन्मजात विषपायी ठहरे, पृष्ठ 25
[2] वही, पृष्ठ 21

कुछ अन्य गजलों में कवि ने निराशा, हताशा भी व्यक्त की है, वह स्पष्टतः स्वीकारता है–

चीखे बहुत, पर किसी को भी न जगा पाये,
जमीन ही कुरेदते रहे, बीज न उगा पाये।

सूरज के वंशज हैं, यह भ्रम पाले रहे,
अपने निकट तक से अँधेरा न भगा पाये।[1]

कुछ रचनाओं में कवि का मन सांसारिकता से ऊब कर संसार को मृगमरीचिका कहकर मनुष्य को उसमें लिप्त न होने की प्रेरणा देता है। ऐसी ही एक गजल की चंद पंक्तियाँ देखें–

जगती से जीवन लिपट रहा है यों ही,
सांसें गिन–गिनकर घिसट रहा है यों ही।

पल–पल, क्षण–क्षण बूँद–बूँद सा रिस–रिसकर,
यह जीवन–अमृत निपट रहा है यों ही।

चादर उजली, मैली कर डाली सारी,
अब दागी चादर छिटक रहा है यों ही।[2]

समीक्ष्य काव्य संग्रह में अनेक कविताएँ राष्ट्रीय चेतना तथा देश भक्ति से ओतप्रोत हैं। 'उत्तराधिकारी हो प्रताप के' शीर्षक ऐसी ही एक रचना में कवि ने देशवासियों को चेताते हुए कहा है कि– हमारी सीमाओं को रोंदने वाले एवं हमारे वीर सैनिकों को असमय काल का कवल बनाने वाले, मर्यादाओं को खण्ड–खण्ड करने वाले शत्रुओं से

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, जन्मजात विषपायी ठहरे, पृष्ठ 28
[2] वही, पृष्ठ 32

केवल शांतवार्ता करने से कुछ नहीं होगा, उन आँधियों को रोकने के लिये चट्टान बन जाने की आवश्यकता है, जब तक प्रलयंकर नहीं बन जाते और शंकर जी के समान अपना तीसरा नेत्र नहीं खोलते, तब तक इन शीतल छीटों का शत्रु पर कोई प्रभाव नहीं पड़ने वाला। ऐसे तो हमारे राष्ट्रबीर असमय शहीद होते रहेंगे और हम केवल शोक सभाएँ करने की औपचारिकता दौहराते रहेंगे–

और ये
बे–कसूरों के बलिदान का सिलसिला
कभी खत्म नहीं होगा ऐसे
कपोत शांति के
ऐसे ही उड़ाते रहे
तो होगा क्या
व्यर्थ
असमय वे
दम तोड़ते रहेंगे
और हम
करते रहेंगे बार–बार
शोक–सभाएँ
मात्र
शोक सभाएँ[1]

देश में यहाँ–वहाँ जिहाद के नाम पर आतंकी घटनाओं को अंजाम देने वाले सिरफिरों को कवि ने कायर, पिशाच, नराधम तक कहा है। कवि उनसे प्रश्न करता है कि–

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, जन्मजात विषपायी ठहरे, पृष्ठ 31

हे पिशाचो
नराधमो
आए दिन करते हो–
विस्फोट बमों के
श्रृंखलाबद्ध धमाके
हासिल क्या होगा ऐसा करके
बताओ तो
भीड़ भरे बाजारों में
चौराहों पर
स्टेशनों
गलियारों में
बम फोड़कर
छीन कर निर्दोष जन–प्राण
क्या मिलता है तुम्हें
मन्दिरों–मस्जिदों को भी नहीं छोड़ते।
नापाक करतूतों से
करते हो नापाक उन्हें।[1]

'जन्मजात विषपायी ठहरे' में अनेक कविताएँ समाज एवं सामाजिक पृष्ठभूमि को लेकर भी रचित हैं। कवि दीपावली तथा होली जैसे त्यौहारों पर अपने ढंग से रचित कविताएँ यहाँ प्रस्तुत की है, ऐसे प्रचलित त्यौहारों में होली भी एक है, कवि ने माना है कि बिना अंतर्मन की उमंग के ऐसे सभी त्यौहार दिखावटी ही होते हैं। 'मन हुरिहारा हो तो होली है' शीर्षक रचना की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, जन्मजात विषपायी ठहरे, पृष्ठ 44

आज के गले मिलन का
यह कैसा दिखावटी चलन
जहाँ–तहाँ नारंगी की फाँकों सा
अभिनयी मिलन
आवरण के भीतर कुछ और
बाहर स्नेह–संवेदना
तल में कदाचार
प्रकट छद्म शिष्टाचार[1]

प्रस्तुत काव्य संग्रह में प्रकृति चित्रण परक भी एक–दो कविताएँ भी संकलित हैं, ऐसी कविताओं में 'हरिद्वार में गंगा' शीर्षक रचना उदाहरणार्थ देखी जा सकती है, ऐसी कविताओं के अन्तर्गत कवि ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अपने प्राणों को देश की बलिवेदी पर न्यौछावर करने वाले अनेक ज्ञात–अज्ञात वीरों को 'शत–शत नमन' शीर्षक रचना में अत्यन्त भावपूर्ण श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कवि लिखता है–

स्वातंत्र्य समर के
उस महायज्ञ में
वे जो–
बनकर समिधाएँ
होम गये प्राण
जननी की लाज बचाने
हँसते–हँसते
कर गये महा प्रयाण
उनके उत्सर्ग को नमन
शत–शत नमन।[2]

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, जन्मजात विषपायी ठहरे, पृष्ठ 55
[2] वही, पृष्ठ 62

'टुकुर–टुकुर देखे भगवान' शीर्षक रचना में देश के गरीबों, असहायों, सर्वहाराओं के प्रति संवेदना प्रकट करते हुए ईश्वर तक को ललकार दिया है, वह मानता है कि गरीब का न मान होता है न स्वाभिमान। उसकी जिन्दगी ऐसे ही हाँफते–काँपते कट जाती, उसके प्रति प्रेम के दो बोल सुनने को नहीं मिलते। कवि कहता है–

मनुष्य की तरह इसे जीने का अवसर कहाँ,
क्या कभी कोई समझेगा इसे इन्सान?

भले मानुषों की दशा आज है ऐसी ही,
जो चाहे जब मरोड़ देता चोटी–कान।

जन्मा अंधेरे में–मरता भी अँधेरे में,
पूरी कहानी टुकुर–टुकुर देखे भगवान।[1]

आज की प्रदूषित राजनीति पर कवि ने जहाँ भी उसे अवसर मिला है, अत्यन्त तीव्र प्रहार किये हैं। ऐसी कविताओं में 'सूर्य भी लाल है', 'अब न रहा कोई अनमोल', 'निर्णायक बन बैठा कौओं का समाज', 'हर पंक्षी है अधीर', 'जन्मदिन उनका', 'गांधी को बिलखना है जरूर', 'बेशर्म परत–गला रे' इत्यादि कविताएँ देखी जा सकती हैं। ऐसी कविताओं में कवि ने आज की बेशर्म, भृष्ट, दिखावटी, कलुषित राजनीति की हर तरह से बखिया उधेड़ी हैं।

'शिल्पी हूँ' शीर्षक कविता प्रस्तुत संग्रह की एक ऐसी रचना है, जिसमें कवि का काव्यादर्श, जीवन दर्श तथा स्वयं की आस्था–अनास्था सभी कुछ शब्द–शब्द में पिरोया गया है, प्रस्तुत रचना कवि चेतना का जीवन्त उदाहरण है। कुछ अन्य कविताओं में– 'तृप्ति', 'मन दुःखता है',

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, जन्मजात विषपायी ठहरे, पृष्ठ 64

'कर्म गीता', 'उम्र भले छोटी मिले', 'जगायेँ आदमी को', 'सब पता है तुझे' इत्यादि कविताएँ कवि की संवेदनशीलता, उद्देश्य के प्रति ईमानदारी तथा मानवीय जीवन मूल्यों में गहरे विश्वास को प्रकट करने वाली है। जहाँ तक शिल्प का प्रश्न है प्रायः ये सभी कविताएँ कवि के अनुसार सहज कविताएँ ही हैं। कवि ने प्रस्तुत कविताओं के संग्रह में स्पष्टतः लिखा भी है– ''प्रयत्न पूर्वक मैं कुछ नहीं लिखता, प्रारम्भ से ही मैं सहज कविता का पोषक–पक्षधर रहा हूँ। मेरा मानना है कि कविता को सहज ही होना चाहिए। मस्तिष्क को खुरच–खुरच कर लिखी जाने वाली कविता चमत्कृत तो कर सकती है, पर सहृदय के मन को छू नहीं सकती।[1]

^'k"k & v'k"k* ¼vi:dkf'kr½ &

यह अप्रकाशित काव्य कृति अभी प्रकाशन की बात तो दूर है सही–सही ढंग से इसकी पाण्डुलिपि भी तैयार नहीं हुयी। इसलिये अभी यह कह सकना संभव नहीं है कि प्रस्तुत कृति में कुल कितनी रचनाएँ संकलित हैं। मोटे तौर पर सन् 2012 में प्रकाशित जन्मजात विषपायी ठहरे, के प्रकाशन के बाद रचित रचनाएँ इस संग्रह में प्रकाश्य हैं। कुछ काव्य रचनाएँ जो अब तक के किसी काव्य संकलन में स्थान नहीं पा सकी हैं, उन्हें भी प्रस्तुत संग्रह में सम्मिलित किया जा सकता है, प्रस्तुत संग्रह कवि के शब्दों में उनका 'अन्तिम काव्य संग्रह है' लगभग 82 वर्ष की आयु में शारीरिक, मानसिक शक्तियाँ दुर्बल हो जाने के कारण सृजन प्रक्रिया शिथिल होना, स्वाभाविक है, इस दृष्टि से उपलब्ध रचनाओं में सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना के अध्ययन का प्रयास किया जा रहा है। जहाँ कवि के उपलब्ध कुछ मुक्तक हैं, विविध विचारों तथा भावों को प्रकट करके उनके दोहों तथा गजलों एवं कविताओं का अध्ययन का

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, जन्मजात विषपायी ठहरे, मेरी ये कविताएँ, पृष्ठ 6

आधार बनाकर निष्कर्ष प्रस्तुत किये जा रहे हैं। प्रगल्भ कवि की ये रचनाएँ भी हर दृष्टि से प्रौढ़ हैं।

यहाँ तक 'शेष–अशेष' के दोहों का प्रश्न है, उनमें विचारों तथा भावों की विविधता देखने को मिलती है। शेष–अशेष के अनेक दोहे आध्यात्मिक चेतना से परिपूर्ण हैं, वहीं उनमें समाज और व्यक्ति जीवन के प्रायः सभी विषयों को कवि ने अपना विषय बनाया है, इसमें एक दोहा देखें, जिसमें कवि ने इस संसार को एक बड़ा रंगमंच माना है तथा ईश्वर को उसका अज्ञात सूत्रधार कहा है, कवि कहता है–

बड़ा बहुत है, रंगमंच, सूत्रधार अज्ञात।
हम सब अभिनय कर रहे, उसे सभी कुछ ज्ञात।।[1]

इसलिये कवि ने सभी से सात्विक जीवन अपनाने का आग्रह किया है, तथा सभी को शुभ कार्यों में वह रत देखना चाहता है। कवि कहता है कि–

गिद्ध चील बनना नहीं, बनो विवेकी हंस।
राम बनो रावण नहीं, बनना कभी न कंस।।[2]

इसलिये कवि सभी सामाजिकों से आग्रह करते हुए कहता है–

रवि से तेजस्वी बनो, शशि सा करो उजास।
अंधकार न रहे कहीं, ऐसे करो प्रयास।।[3]

इसलिये हम सभी को मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम को अपना आदर्श मानकर उनके आदर्श चरित्र का अनुकरण करना चाहिए–

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, दोहा खण्ड से
[2] वही
[3] वही

राम हमारे ईष्ट हों, रहे राम आदर्श।
चाहे हित सबका सदा, सबका ही उत्कर्ष।।[1]

पोषित मानवता करे, समरसता सम रूप।
राष्ट्रोत्थान लक्ष्य हो, माँ का सजे स्वरूप।।[2]

श्री राम ही कवि के ईष्ट देव हैं और जीवनादर्श भी हैं। उसका विश्वास है कि हम जो कुछ करते–कराते हैं, उसके मूल में श्री राम ही प्रेरणा रूप में विद्यमान रहते हैं–

करें कराएँ राम ही, हम हैं माध्यम मात्र।
निर्मल मन से बन सके, उनके कृपा पात्र।।[3]

कवि को तब असहनीय वेदना होती है, जब राम के देश में राम को तथा उनके आदर्शों को कुछ लोग नकारते दिखते हैं इसे कवि अद्‌भुत दुर्योग मानता है–

राम तुम्हारे देश में, तुम्हें नकारें लोग।
नकारते पुत्र पिता को, अद्‌भुत यह दुर्योग।।[4]

'शेष–अशेष' में कवि ने अपने दोहों के माध्यम से भृष्टाचार, प्रदूषित राजनीति, व्यक्ति का चारित्रिक पतन, लूट–खसोट, सामाजिक अव्यवस्थाएँ तथा अनेक दोहों में प्रकृति के सुरम्य चित्र भी उकेरे हैं। कवि ने भृष्टाचार को प्रचलित अन्य 'वादों' के समान ही वर्तमान का एक अत्यन्त प्रबलवाद माना है और उसे 'खाओवाद' नाम दिया है, क्योंकि नगरों, गाँवों तथा प्रशासन में विधायिकाओं में– सभी जगह तो 'खाओवाद'

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, दोहा खण्ड से
[2] वही
[3] वही
[4] वही

का वीभत्स प्रसाद देखने को मिलता है, यह खाओवाद ऐसा वाद है, जिसको अपनाकर खाओवादी सर्वसुख प्राप्त कर रहा है, कवि कहता है–

है इलाज हर मर्ज का, अब तो खाओवाद।
बिना दिये कुछ तो नहीं, चाहे खुद बर्वाद।।[1]

आज समाज व्यक्ति जीवन का हर क्षेत्र खाओवाद के क्षेत्र में भी कुछ नेता, अफसर, सभी खाओवादी हैं। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी कुछ पीत–पत्रकार, खाओवादी बनकर समाज का शोषण करते हैं, हमारी राष्ट्रीय सेनाओं में भी सेना के कुछ अधिकारी, कर्मचारी, सेना की गुप्त सूचनाएँ बेचते रहते हैं।

सेना तक में कुछ घुसे, खाओवादी चोर।
गुप्त सूचनाएँ बिके, बचा न कोई छोर।।[2]

यही नहीं भक्ति और अध्यात्म के क्षेत्र में भी कवि के अनुसार खाओवाद भी परिलक्षित होता है–

मठ मन्दिर तक को लगा, खाओवादी रोग।
भेंट देखकर ही लगे, देवों को अब भोग।।[3]

स्वामी जी के भी निकट, खाओवादी दास।
श्रद्धा–भक्ति अर्थहीन, चमचागीरी पास।।[4]

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, दोहा खण्ड से
[2] वही
[3] वही
[4] वही

स्थिति बहुत चिन्ताजनक हो रही है, हर क्षेत्र में खाओवाद खुलकर चल रहा है, मंत्री से लेकर संतरी तक सभी इस ठेल–मठेल में रहते है, डॉक्टर, मास्टर कोई इससे अछूता नहीं है।

डॉक्टर मास्टर सभी, बोये खाओवाद।
राष्ट्र की चिन्ता नहीं, ध्वस्त निष्ठावाद।।[1]

देश के हर क्षेत्र में कोर्ट, कचहरी से लेकर गाँव, चौपाले, पंचायतों तक मैं यह खाओवाद जमकर चल रहा है, कवि के अनुसार सर्वव्यापी 'ब्रह्म' की तरह खाओवाद आज सारे देश में पनप रहा है। दवाएँ तथा दूध जैसी अत्यनत आवश्यक वस्तुएँ खाओवाद की चपेट में हैं, जाँचों के दिखावटी नाटक चलते रहते है और ऐसे भ्रष्ट तत्वों का कुछ भी नहीं बिगड़ पाता। कवि अत्यन्त भारी मन से इस खाओवाद को अत्यंत निन्दनीय कहता है–

दूध, दवा में भी मिले, अब तो खाओवाद।
जाँचों के नाटक चले, छपते रोज विवाद।।[2]

खाओवाद के पनपने का मूल कारण यही है कि आज आदमी बिना परिश्रम के जीवन के नये–नये स्वाद चखना चाहता है, बिना परिश्रम के अधिक से अधिक धन सम्पत्ति प्राप्त करना चाहता है और ऐसा देखने में भी आ रहा है कि खाओवाद अपनाकर लोग अल्प समय में भी आशा से अधिक धनार्जन कर लेते हैं, ऐसी स्थिति में लोभजयी बनने की प्रेरणा देते हुए कवि कहता है कि–

हैं लोभजयी के हाथ में, मुठ्ठी में तकदीर।

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, दोहा खण्ड से
[2] वही

लालच में डूबा वही, रहता सदा अधीर।।[1]

इस प्रकार के अनेक दोहे 'शेष–अशेष' में संकलित हैं। भृष्ट लोगों पर कवि ने अनेक दोहों में तीक्ष्ण प्रहार किये हैं, अग्रलिखित एक दोहा देखें–

बकरी को चारा नहीं, चरे मलाई सांड।
अनगिनत है स्वांग अब, भाँति–भाँति के भांड।।[2]

भृष्टाचार पर कठोर प्रहार करने वाले ऐसे अनेक दोहे 'शेष–अशेष' में देखे जा सकते हैं। कवि ने शब्द महिमा के भी अनेक दोहे प्रस्तुत संकलन में दिये हैं। शब्द महिमा के आपके ऐसे दोहे अनेक पत्र–पत्रिकाओं में भी शामिल हुए हैं। आज वर्षा के अभाव के कारण जब त्राहि–त्राहि मची हुई है तब जल संरक्षण के लिये भी कवि प्रेरक दोहें लिखता है, इसका विश्वास है कि संसार में जो कुछ है, वह जल के कारण ही है– 'जल जीवन का पर्याय है', जल चेतना के ऐसे अनेक दोहे 'शेष–अशेष' में संकलित है, एक दोहा देखें–

पानी है तो जगत है, पानी बिन सब धूल।
सागर भी कहता यही, कहते सरिता कूल।।[3]

व्यक्ति की निष्क्रियता, कर्तव्यों के पालन में अरुचि, देशप्रेम की भावना का अभाव तथा अन्य चारित्रिक पतन के लक्षणों को भी एक आधार बनाकर कवि ने बड़े सहज स्वाभाविक दोहे लिखे हैं, अन्ततः वह देश वासियों में इन सभी न्यूनताओं की पूर्ति के लिये राष्ट्रप्रेम की भावना

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, दोहा खण्ड से
[2] वही
[3] वही

के उन्नयन तथा राष्ट्रीय चरित्र के सम्प्रेषण को इन सब न्यूनताओं का समाधानकारी मानता है। कवि सभी देशवासियों से मानवता के उच्चतम शिखर को छू लेने का आग्रह करता है–

हिम गिरि से ऊँचे उठो, छूलो तुम आकाश।
चमकों सूरज से सदा, फैला दिव्य प्रकाश।।[1]

अन्त में कवि की कर्तव्य और कर्ममय निष्ठा संबंधी एक दोहा और उद्धृत करना चाहूँगा। प्रस्तुत दोहे पर गीता के कर्म सिद्धान्त तथा गोस्वामी तुलसीदास के ''कर्म प्रधान विश्व कर राखा'' का प्रभाव स्पष्टतयः देखा जा सकता है। कवि कहता है–

जन्म–मरण के बीच है, दिवस, मास, तिथि, बार।
कर्मों की मसि से छपे जीवन का अखबार।।[2]

e|äd&

'शेष–अशेष' में अनेक हृदय स्पर्शी मुक्तक भी संकलित हैं, प्रस्तुत काव्यकृति के प्रकाशन तक और भी अनेक मुक्तक लिखे जाने की संभावना है। उन्हें भी प्रस्तुत संग्रह में सम्मिलित किये जाने की संभावना है। पूर्व में कवि की 'त्रिगंधा' में हमने डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा के अनेक मर्मस्पर्शी मुक्तकों का अध्ययन किया है, वैसे ही कुछ मुक्तक यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं। इन मुक्तकों में जहाँ एक और आध्यात्मिक चेतना की झलक देखने को मिलती हैं, वहीं दूसरी ओर सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना एवं राष्ट्रभक्ति के भाव भी अपना प्रभाव बिखेरते हुए देखे जा सकते हैं।

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, दोहा खण्ड से
[2] वही

कवि की ईश्वरमय अनन्य आस्था है। वह मनुष्य की हर साँस को ईश–वरदान मानता है और यह भी मानता है कि ये ईश्वरदत्त साँसें सुनिश्चत हैं। इसलिये इन्हें व्यर्थ में बर्वाद न करने का आग्रह कर सभी से कहता है–

हर साँस हैं प्रभु का वरदान मान लीजीये,
इनसे अधिक कुछ न मूल्यवान, जान लीजीये।
ये सुनिश्चित साँसें घटेगी–बढ़ेगी नहीं।
इन्हें व्यर्थ न करे बर्वाद, ठान लीजीये।[1]

कुछ मुक्तकों में कवि ने धर्म को भी परिभाषित किया है, ऐसे अनेक मुक्तक हैं, जिनमें धर्म की मानव के व्यवहारिक जीवन में उपादेयता को ध्यान में रखकर अत्यन्त व्यवहारिक निष्कर्ष प्रस्तुत किये गये हैं, यहाँ उनमें से एक–दो मुक्तक उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं –

धर्म जीवन की गति है– सुगति है,
सत्कर्मों की सात्विक सुगति है।
स्व–पर का भेद मिटाता है धर्म,
धर्म बिन्दु की सिन्धु में परणीत है।[2]

एक और मुक्तक देखिये–

धर्म नाम है वासनाओं के क्षरण का,
अपने अति चंचल मन के वशीकरण का।
बुद्धि–प्राण जाग्रत हो सके जिस मंत्र से,
धर्म नाम है सर्व–कल्याण के वर्ण का।[3]

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, दोहा खण्ड से
[2] वही
[3] वही

ऐसे ही मन के अन्तर पट को खोल देने वाले कुछ और मुक्तक भी प्रस्तुत संग्रह में संकलित हैं।

राष्ट्र उत्थान तथा देश प्रेम से परिपूर्ण मुक्तक भी प्रस्तुत संग्रह में पढ़ने को मिलते हैं, कवि का मानना है कि देश के उत्थान के लिये श्रम और एकता बहुत आवश्यक है। आतंक और अलगाव की भावना से तो देश को हानि ही पहुँचती है।

श्रम और ऐक्य से देश का उत्थान होता है,
आतंक–अलगाव से तो देश वीरान होता है।
धन की भी चाह करे उतनी कि काम न रूके कोई,
मनुष्य तो केवल मनुष्यता से धनवान होता है।[1]

देश की तथा समाज की उन्नति के लिये देशवासियों का चरित्रवान होना अति आवश्यक है, उन्हें हर स्थिति में ईमानदार रहना होगा, कर्तव्य पालन को कवि ईश्वर से कम महत्व नहीं देता। वह चाहता है कि देश का हर व्यक्ति अपने कर्तव्यपालन में किसी प्रकार की कमी न रहने दे, इसके साथ ही उसे स्वाभिमानी भी होना चाहिए।

स्वाभिमान में अदम्य दमक होती है,
जबकि अभिमान में सिर्फ बहक होती है।
जिन्दगी जो मंजती है कठिनाईयों में,
उसमें सदा कुन्दन सी चमक होती है[2]

देश के प्रत्येक वासी को देश की उन्नति के लिये कठोर कर्म करने की आवश्यकता है–

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, दोहा खण्ड से
[2] वही,

ऊपरी तना सींचने से कुछ होगा नही,
लेटे–बैठे सोचने से कुछ होगा नहीं।
नियत लक्ष्य छूने चलना पड़ेगा शक्तिभर,
ऊँगली पर कोष गिनने से कुछ होगा नहीं।[1]

'शेष–अशेष' का कवि मनुष्य के चारित्रिक पतन से अत्यधिक दु:खी है। आज जब वह सर्वत्र भ्रष्टाचार, लूट–खसोट, मुनाफाखोरी, मिलावटखोरी, चापलूसी, कदाचार और ऐसी ही सारी गिरावट मनुष्य चरित्र में देखता है तो उसके सचेत मन को क्लेश होता है। आज जहाँ देखो वहीं खुशामदखोरों की भीड़ दिखाई देती है। वह सीधे–सीधे ऐसे लोगों पर प्रहार करते हुए लिखता है। ऐसे लोगों के कारण ही महँगाई बढ़ी है। ऐसी विषम परिस्थितियों में कवि सभी से अपना मनोबल उच्च रखने का आग्रह करता है–

मनोबल टूट जायेगा तो हार जायेगा।
मनो–मल छूट जायेगा तो पार जायेगा।।
जिन्दगी तो खेल है, खेल, खेल की ही तरह,
लग्न–निष्ठा से जीत का उपहार पायेगा।।[2]

आज की विषम परिस्थितियों में भी वह लोभ–लालच से अलग रहकर धैर्य बनाए रखने का सभी से आग्रह करता है–

प्रतिकूलताएँ न जिसको हिला पायँ,
आँधियाँ भी धूल में न मिला पायँ।
धैर्य की चट्टान पर जो खड़ा,
लोभ–लालच में उसका किला पायँ।[1]

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, दोहा खण्ड से
[2] वही

आज जो निर्वाचित जन सेवक हैं वे भी जन सेवा में ईमानदारी से रुचि नहीं लेते, आज देश की संसद तथा विधायिकाओं में जो कुछ हो रहा है, वह अत्यन्त हास्यास्पद है तथा चिन्ता के योग्य है। आज जो कमजोर है, उसका शोषण हो रहा है और जो बलशाली है उसका स्वागत हो रहा है–

मजबूर का शोषण सभी करते हैं,
निर्दोष पर दूषण प्रायः गढ़ते हैं।
भेड़ियाधसान का चलन नया नही,
बलशाली की चिलम सभी भरते हैं।[2]

आज स्थितियाँ इतनी भयाभय हो गई हैं कि भले लोग अल्पमत में रह गये हैं –

अवगुंणी ही पुज रहा, गुणी मान पाता नहीं,
मूल्यवान वह, जिसका मूल्यों से नाता नहीं।
कौओं की भरमार में सारे हंस उपेक्षित हैं,
इस विषैले अंधड़ में भला टिक पाता नहीं।[3]

ऐसे अनेक मुक्तक 'शेष–अशेष' में पढ़ने को मिलते हैं, ये मुक्तक बहुत संक्षिप्त होते हुए भी मन पर अधिकतम प्रभाव छोड़ने वाले हैं, इनमें अर्थ बोधकता और प्रभावित करने की विलक्षण क्षमता है।

डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा के संग्रह में जो हिन्दी गजलें प्रकास्य हैं, प्रायः वे सभी सामाजिक–सांस्कृतिक चेतना, राष्ट्रीयता, मूल्यपरकता की

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, दोहा खण्ड से
[2] वही
[3] वही

ही ध्वजवाहक है। प्रायः सभी गजलों की पृष्ठभूमि में भी देश और समाज ही विद्यमान है, कुछ गजलों में कवि ने सामाजिक विद्रूपताओं, राजनीतिक–नैतिक, अद्यपतन पर भी तीक्ष्ण प्रहार किये हैं, इनमें से अधिकांश गजलें वीणा, संकल्परथ, शिखरवार्ता, छप्ते–छप्ते, नई दुनिया, स्वदेश, इत्यादि पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं। ऐसी गजलों में तीक्ष्णता अधिक है, कवि ने क्षोभ बस ही इनका सृजन किया है। कुछ पंक्तियाँ देखें–

धूप और शुद्ध हवा सुलभ नहीं कुछ को,
कुछ को धरती का विस्तर करते बहुत हो गया।
बिना कुछ किये भोग उन्हें लगते छप्पन,
गीली लकड़ी इधर सुलगते बहुत हो गया।
सच्चाई बेवस गिड़गिड़ा रही हर जगह,
नैतिकता के आँसू झरते बहुत हो गया।

इसी गजल की अन्तिम द्विपदीय में कवि ने देश के भीतर और बाहर के शत्रुओं को सबक सिखाने के लिये कर्णधारों को प्रेरित करना चाहता है–

भीतर बाहर विषधर खड़े हुए फन ताने,
मधुर–सुरीली महुअर बजते बहुत हो गया।।[1]

कभी–कभी कवि की मनः स्थिति ऐसी भी हो जाती है, कि वह अपने सारे दर्द को चुपचाप पी जाना चाहता है–

दर्द खुद का खुद से खुद कह लीजिये,

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, गजल खण्ड से

जहाँ तक बने चुप–चाप सह लीजिये।
समय स्वार्थी इतना कि क्या कहे,
पहले इस समर को फतह कीजिये।
बेशर्म कचरा आस–पास बिखरा बहुत,
हर स्वप्न को स्वच्छ सतह दीजिये।
असफलताओं की पोट ढुबे नहीं,
गति के साथ उन्हें भी तह कीजिये।[1]

देश के आंतरिक पटल पर जब कवि दृष्टि डालता है, तो उसे समस्याएँ ही समस्याएँ दिखलाई पड़ती हैं, इन समस्याओं के मूल में कवि को नैतिक मूल्यों का अभाव ही दिखलाई पड़ता है, वह लिखता है–

जहाँ भी नजर डाले, है समस्या बड़ी,
हर जगह कोई न कोई आपदा खड़ी।
जगह–जगह झूठ फरेब की, सेना अड़ी।
बेईमानी डंका बजा रही निर्भय,
चोर–चोर मोसेरे, जुड़ी सबकी कड़ी।[2]

इस गजल में वह आगे लिखता है–

सच का व्याकरण कालातीत हो गया,
अपना ली समय ने झूठ की बारहखड़ी।
भामासाहों के गाँव सूने हो गये,
ध्वजा परमार्थ की, स्वार्थ में जकड़ी।[3]

एक ऐसी ही अन्य गजल में कवि ने देश के कर्णधारों को चेताने के लिये कुछ प्रयास किये हैं। उनकी तुष्टीकरण की नीति से वह दु:खी है, वह कहता है–

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, गजल खण्ड से
[2] वही
[3] वही

कारण की तो अनदेखी कर रहे सभी,
व्यर्थ की बातों को दे रहे हैं तूल
जहाँ नस्तूर जरूरी नासूर के लिये,
वहाँ उढ़ाते रहे हैं रेशमी दुकूल।[1]

समाज में नये पन की आँधी सी चल रही है। छोटे–बड़े सभी पर पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव और उसके अंधानुकरण के दुष्प्रभाव परिलक्षित हो रहे हैं। मर्यादाओं की चूले तक हिल रही है कवि कहता है–

नये पन की आँधी ने जड़ें उखाड दीं,
सभी तो उड़ा रहे हैं, इज्जत की धूल।[2]

देश के छोटे से लेकर बड़े व्यक्ति तक सामाजिक मूल्यों की गिरावट दिखलाई पड़ती है, कवि को ऐसे लोग अधिक दिखलाई पड़ते हैं, जो देखने के लिये ही आदमी हैं, आवरण से वे पशु से भी बदतर हैं। देश में ऐसे लोगों की भरमार है, जो दूसरों की बुराईयाँ उजागर करने में ही सक्रिय दिखते है और व्यर्थ की बातों में ही अधिक रुचि लेते हैं। समाज में परिवेश में कटुता घोलने वाले ऐसे व्यक्तियों के सन्दर्भ में कवि कहता है–

बातें सब बे–सिर–पैर–की,
केवल कटुता घोलते हैं।
पक्के छिद्रान्वेषी ठहरे,
गढ़े मुर्दे खखोलते हैं।
आदमी रुपी आदमी है,
तन–मन में ढ़ोर डोलते हैं।[1]

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, गजल खण्ड से
[2] वही

ऐसे व्यक्तियों को चेतावनी देते हुए प्रस्तुत संग्रह की एक गजल में कवि लिखता है–

निष्ठाएँ बदलीं कपड़ो की तरह,
चेतें अब बहुत सो लिये हुजूर।
नये आयाम दें जिन्दगी को,
गढ़े मुर्दे न खखोलिये हुजूर।[2]

कवि को समाज में आडम्बरी लोगों की भरमार दिखलाई पड़ती है, ऐसे लोग काम तो बहुत थोड़ा करते हैं पर उसका दिखावा बहुत अधिक करते हैं, ऐसे व्यक्तियों पर कटाक्ष करते हुए कवि लिखता है–

न्यूनतम को अधिकतम दिखाना चाहते हैं,
करके तोले भर, मन भर गिनाना चाहते हैं।
विषैले नागों ने आ घेरा है हर तरफ से,
लोरियाँ गाकर उन्हें बहलाना चाहते हैं।[3]

ऐसे ही एक अन्य गजल में हमारी विरोधाभाषी जिन्दगी के संबंध मैं अत्यन्त तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की है, वह लिखता है–

चकाचौंध पी–पी कर,
जिन्दगी धूप बन गई है।
कुंठाएँ सहजते–सहजते,
बिद्रूप बन गई है।[4]

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, गजल खण्ड से
[2] वही
[3] वही
[4] वही

एक ऐसी ही अन्य गजल में कवि ने आज के आदमी की चारित्रिक गिरावट तथा मूल्य विमुखता पर करारे प्रहार किये हैं, कवि आज के समाज में परिवेश में ऐसे मूल्य पथ से भ्रष्ट लोगों की भरमार देख रहा है तथा ऐसे लोगों को ही आज की राजनीति में तथा समाज में प्रमुखता मिलते देखकर वह क्षुब्ध होता है। कवि कहता है–

आदमी अब बोनाशाही हो गया है,
जबकि कुकुरमुत्ता हवाई हो गया है।
जहाँ देखो अति प्रमुख बना दिखता है,
ठग हर मर्ज की दबाई हो गया है।
चाटुकारी–जालसाजी का गणित है,
अब जीरो ही करिश्माई हो गया है।[1]

आज हर क्षेत्र में गिरावट देखी जा रही है, आज का आदमी अमर्यादित भूख लिये, हर क्षेत्र में अधिक से अधिक अर्जन के प्रयासों में नीति–अनीति की परवाह किये बिना आँखें बन्द करके जुटा हुआ है, जिसका आचरण दोहरा है, व्यवहार भी दोहरा है, और प्रदर्शन बुहुमुखी है, कवि लिखता है–

आकंठ भरा है जो है भीतर से खाली।
बाहर–बाहर चमक–दमक अन्दर से काली।[2]

आज के समाज में विषमता के कारण तथा अन्य ऐसे ही विकृत कारणों से पारस्परिक प्रेम तथा सद्भाव में कमी दिखाई पड़ रही है, ऐसी परिस्थितियों में कवि समरसता का पोषण चाहता है।

---

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, गजल खण्ड से
[2] वही

समरस चिंतन हो, बगिया होगी हरी भरी।
अब तक पानी बर्वाद कर रही हर नाली।[1]

देश में अनगिनत खेमों में बटे आदमी को देख कर कवि दुःखी है, वह तब और भी दुःखी हो जाता है, जब आए दिन देश की बेटियों और अबलाओं का शीलहरण होता है, ऐसी परिस्थितियों में वह सभी से सोचने का और समाधान खोजने के लिये आग्रह करता है।

दरारें और दूरियाँ मिटे कैसे, सोचिये,
दिलों में बनी खाईयाँ पटे कैसे सोचिये।
अबला बेटियों तक को नोंच खाते जानवर,
पशुता की ये बेड़ियाँ कटे कैसे सोचिये।
भूख सभी की आज अमर्यादित हो गई है,
अतृप्ति की मोटाईयाँ छटें कैसे सोचिये।[2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'शेष–अशेष' में संकलित हिन्दी गजलों का विचार फलक बहुत व्यापक है। देश और समाज के हर खोखले पक्ष को सँवारने के लिये अपने बहुमूल्य निष्कर्ष प्रस्तुत गजलों के माध्यम से दिये हैं। शेष–अशेष में जो कविताएँ संकलित हैं, उनमें ज्वलंत प्रश्न भीतर देखें, शुभ दीपावली, आज दिवाली है, होली, सड़क किनारे का पेड़, गऊमाता, माता हमारी, कैसे मिटेंगे दाग–धब्बे, प्लास्टिक के टुकड़े बीनता बालक, इत्यादि कविताएँ प्रमुख है– ये सभी कविताएँ छन्दमुक्त हैं, इन कविताओं में कवि ने उसे जब जहाँ जो कमी दिखाई दी है, उसी को आधार बनाके मनुष्य के चरित्रोन्नयन के लिये कविता के रूप में कुछ न कुछ लिख दिया है। समाज को चेतना–जगाना कवि का

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, गजल खण्ड से
[2] वही

मूल कर्तव्य है। ये, तथा अन्य ऐसी ही कविताएँ कवि के इसी आशय को प्रकट करती हैं।

''ज्वलंत प्रश्न'' शीर्षक कविता देश की स्वतंत्रता के सात दशकों बाद भी आरक्षण जैसी एक अत्यन्त विशाक्त विद्रूपता पर सीधे–सीधे प्रहार है। कवि ने प्रस्तुत कविता में यह स्वीकार किया है कि शताब्दियों पूर्व इस देश में पिछड़े दुर्बल, सर्वहाराओं का शोषण हुआ होगा, उनका अनादर, उत्पीड़न भी हुआ होगा, दमन, अत्याचार सब कुछ हुआ होगा, किन्तु आज बिल्कुल वैसा नहीं हैं। सभी बराबर हैं, तबके पीड़ितों की संतानें भी आज पूरी तरक्की कर ली है, उन्हें पढ़ने–बढ़ने के समान अवसर प्राप्त हैं। आरक्षण के नियमों के अन्तर्गत और भी विशेष सुविधाएँ प्राप्त हैं। फिर उस समय के पीड़ितों की कथित संतानों को आज के बदले परिवेश में आरक्षण की विशिष्ट सुविधा क्यों मिलनी चाहिए ? यही ज्वंलत प्रश्न मूलतः इस कविता की प्रेरणा है, वर्षों से ये विशेष सुविधाएँ उन्हें दी जा रही है, इस कारण तबके कथित शोषकों की अत्यन्त प्रतिभावान संतानों को पीछे धकेलने की कोशिश क्यों की जा रही है।

कथित शोषकों की,
प्रतिभावान संततियों के,
सारे प्रगति मार्ग,
हर ओर से
क्यों अवरुद्ध कर दिये गये है ?
क्या अपराध है इस पीढ़ी का ?[1]

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, कविता खण्ड से

कवि ने इस आरक्षण की बीमारी को 'महारक्षण' नाम दिया है। यह इसलिये कि वोट की राजनीति के कारण इसके अन्त का दूर–दूर तक कहीं कोई संकेत दिखलाई नहीं पड़ता कवि कहता है–

वर्ग–संघर्ष के बीज,
वो दिये हैं इस आरक्षण नीति ने,
जाति–आधारित यह वर्ग भेद,
देश को शताब्दियों पीछे धकेलने की घातक साजिश है।[1]

डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा की अन्य कविताएँ भी मनुष्य को मनुष्य के रूप में देखने के लिये विकल हैं। ''पहले भीतर देखें' शीर्षक रचना भी अन्तर ज्योति जाग्रत करने का प्रयास है। ऊपरी उपचारों को कवि व्यर्थ मानता है। इसलिये इसका विश्वास है पहले मन के अंधेरे को दूर किया जाना चाहिए वह कहता है–

पहले मन बुहारे,
तब आँगन सँवारे,
भीतर देखे पहले,
फिर बाहर निहारे,
अन्तर में हैं ढेरों कचरा,
तभी तो रोम–रोम हमारा
है अन्धा–बहरा,
न जाने कब से,
ढो रहे हैं कुसंस्कारी मल,
भीतर–भीतर पोषते रहे हैं, उसे[1]

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, कविता खण्ड से

'शुभ दीपावली' शीर्षक कविता में कवि ने सभी से अन्तर ज्योति जाग्रत करने का ही आग्रह किया है, कवि कहता है–

चले वहाँ,
जहाँ है निराश्रत रातें,
उनमन संध्याएँ,
और जहाँ है,
हर सबेरा रूआँसा,
पहले चले वही,
संबल के दीप लिये,
वही चले पहले,
फिर मनाएँ दीपावली,
शुभ दीपावली।[2]

''सड़क किनारे का पेड़' शीर्षक कविता में कवि ने सड़क किनारे के पेड़ का एक मानवीकरण किया है, पेड़ के समक्ष जैसे–जैसे दृश्य उपस्थित होते हैं, उस सबकी एक जीवन्त झाँकी प्रस्तुत कविता में देखने को मिलती है बीच–बीच में कवि ने पेड़ के माध्यम से मानव समाज में व्याप्त भेद–भाव की नीति, मानव की असंवेदनशीलता तथा हृदयहीनता पर भी प्रहार किये हैं। मनुष्य के अन्य प्राणियों के प्रति कठोर उपेक्षा–भाव पर भी कवि ने वृक्ष के माध्यम से कटाक्ष किया है। कुछ पंक्तियाँ देखें–

मेरे अंक में,
अनगिन पंक्षियों के बसेरे हैं,
उन्हें छाया–काया प्रिय है जितनी,

---

[1] मासिक शिखरवार्ता, भोपाल, दीपावली विशेशांक, अक्टूबर 2014, पृ. 7
[2] छपते–छपते कोलकाता, दीपावली विशेशांक, 2014, पृ. 314

उतने ही वे भी प्रिय हैं मुझे,
जब नित्य सूर्योदय से पहले,
संवेत स्वर में वे स्वर प्रभाती गाते हैं,
तब रोम–रोम मेरा,
आनन्द विभोर हो उठता है,
सच मानें / यह आनन्द ही,
मेरी वास्तविक पूँजी है।[1]

'गऊ माता माता हमारी' शीर्षक रचना में कवि ने भारतीय संस्कृति और सभ्यता में गाय के असीम महत्व को स्वीकार करते हुए गऊमाता के प्रति अपनी पूत भावनाओं को प्रगट किया है। कवि ने स्पष्टतः कहा है कि 'जननी और जन्मभूमि' से बड़ा कुछ भी नहीं है। गऊ माता भी समपूज्या है हमारे देश में गाय, भारतवासियों की बंदना, आराधना का आधार रही है, उसे देवताओं तक ने पूजा है। गाय को कवि भारतीय विरल संस्कृति में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान देता है वह कहता है–

सचमुच धेनु धन है,
मंगल–भवन है,
करुणा सदन है,
शोभायमान जिससे हरित वन सघन है,
ममतामयी माँ क्षमाशीला,
कालिन्दी कूल की जीवन्त लीला,
कारी, भूरी, धोरी, श्यामा,
घनश्याम की प्यारी ललामा,
माता–गऊमाता हमारी।[1]

[1] डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा, शेष–अशेष, कविता खण्ड से

आलोच्य संग्रह की अन्य कविताओ ंमें भी कवि की संवेदनशीलता, उपेक्षित पीड़ितों के प्रति सहानुभूति, आदि मानवोचित भावों की अभिव्यक्ति हुई है, ये सभी कविताएँ कवि के अनुसार सहज कविताएँ हैं। डॉ. कृष्णमुरारी शर्मा को सहज कविता आन्दोलन का प्रणेता कहा है, आपकी गद्य और पद्य की रचनाएँ अखिल भारतीय स्तर पर प्रकाशित होती रहती हैं यह मत समीक्षक डॉ. उपेन्द्र विश्वास का है।[2]

———————————

[1] मासिक मोधन, दिल्ली, दिसम्बर 2016, पृ.6
[2] ग्वालियर की हिन्दी–काव्य परम्परा और विकास, डॉ. उपेन्द्र विश्वास, पृष्ठ 158